NEHRU BAL PUSTAKALAYA

जलियांवाला बाग़

भीष्म साहनी

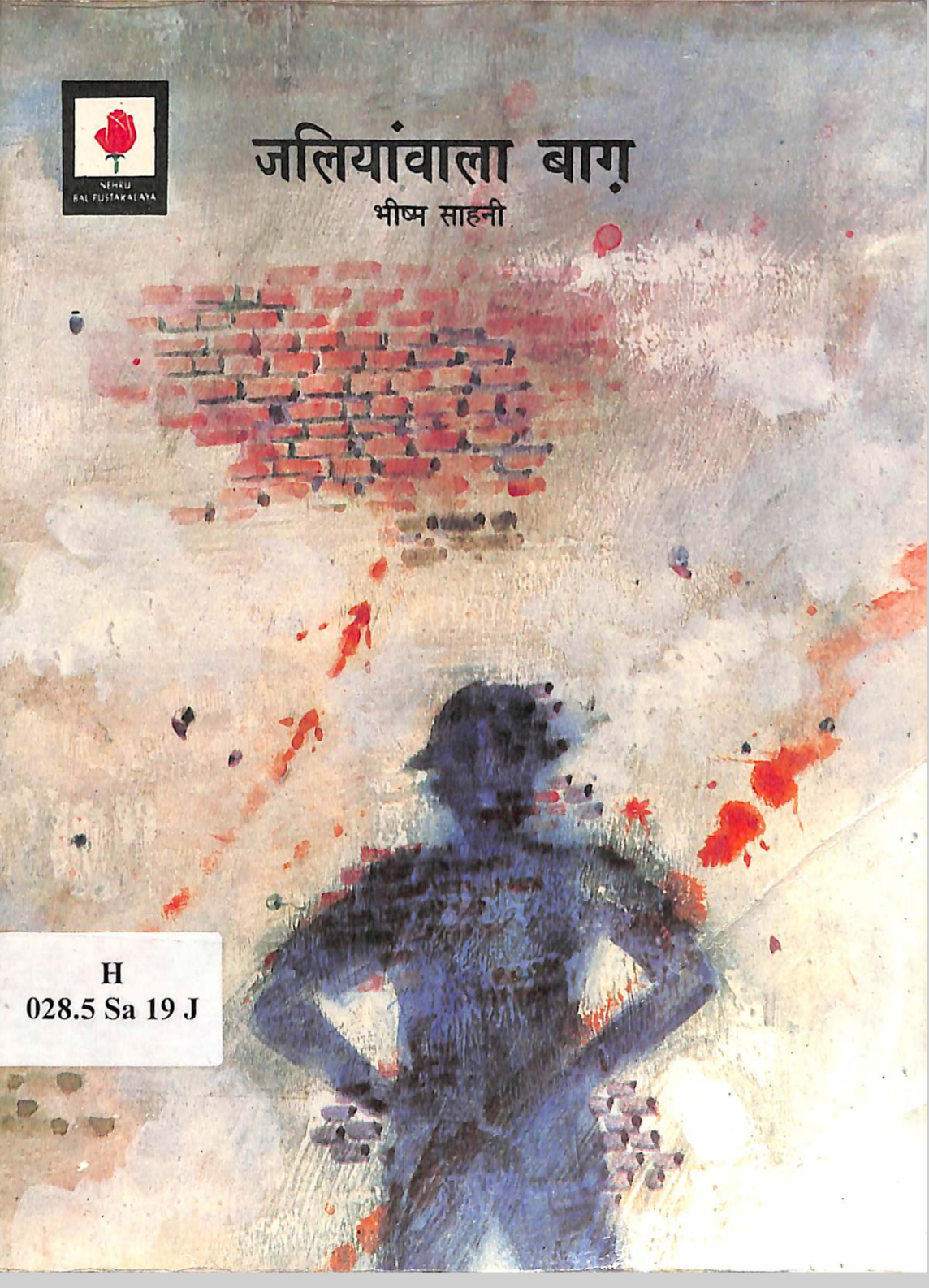

H
028.5 Sa 19 J

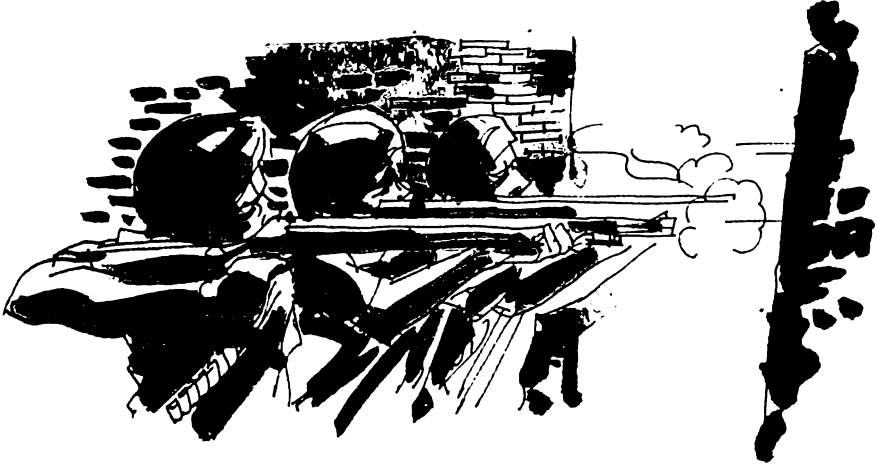

ISBN 81-237-0900-5

पहला संस्करण : 1994
पहली आवृत्ति : 1995 (शक 1917)

© भीष्म साहनी, 1994

Jallianwala Bagh (*Hindi*)

रु. 9.50

निदेशक, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया,
ए-5, ग्रीन पार्क, नयी दिल्ली-110016
द्वारा प्रकाशित

नेहरू बाल पुस्तकालय

Jallianwala bagh

जलियांवाला बाग़

भीष्म साहनी

चित्र

प्रशांत मुखर्जी

नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया

आभार

पुस्तक में दिये गये तथ्य तथा आंकड़ों में से अधिकांश श्री राजाराम कृत *The Jallianwala Bagh Massacre* से लिये गये हैं।

नयी दिल्ली —भीष्म साहनी

17.1.94

Library IIAS, Shimla
H 028.5 Sa 19 J
00087484

87484
4-7-96

H
028.5
Sa 19 J

13 अप्रैल 1919 की शाम को, गोलीकांड के बाद, रतन देवी नाम की एक महिला अपने पति को ढूंढ़ती हुई जलियांवाला बाग में पहुंची। वहां उसने क्या देखा और उस पर क्या बीती, उसका ब्यौरा इस प्रकार है :

मैं जलियांवाला बाग़ के निकट, अपने घर पर थी जब मुझे गोली चलने की आवाज़ सुनायी दी। मैं घबराकर उठी क्योंकि मेरे पति बाग़ में गए हुए थे। दो स्त्रियों के साथ मैं बेहद घबराई हुई, रोती-बिलखती वहां पहुंची। वहां मैंने लाशों के ढेर देखे, और मैं अपने पति को ढूंढ़ने लगी। एक ढेर पार करने के फ़ौरन बाद मुझे मेरे पति की लाश मिल गयी। उस तक पहुंचने के लिए मुझे ख़ून से लथपथ लाशों के बीच से गुज़रना पड़ा था।

कुछ देर के बाद लाला सुंदरदास के दोनों बेटे उधर आये और मैंने उनसे याचना की कि वे एक चारपाई ले आयें ताकि मैं अपने पति की लाश को

घर ले जा सकूं। दोनों लड़के चले गये। मैंने अपनी साथिनों को भी भेज दिया। उस वक्त शाम के आठ बजा चाहते थे। कर्फ्यू के डर से कोई भी आदमी घर के बाहर नहीं निकल रहा था। मैं खड़ी इंतज़ार करती रही, रोती रही।

लगभग साढ़े आठ बजे एक सरदार जी वहां पर आये। कुछ और लोग भी आये जो लाशों के ढेर में कुछ ढूंढ़ रहे थे। मैं उन्हें नहीं जानती थी। मैंने सरदार जी से विनती की कि मेरे पति की देह को किसी सूखी जगह पर रखने में मेरी मदद करें, क्योंकि जहां पर उनकी लाश पड़ी थी, वहां बहुत ख़ून बह रहा था। उन्होंने लाश के सिर के नीचे हाथ दिया, और मैंने पांवों की ओर से उठाया और एक लकड़ी के कुंदे पर रख दिया।

रात दस बजे तक मैं लाला सुंदरदास के बेटों की राह देखती रही पर कोई नहीं आया। मैं उठकर कटरा आबलोवा की ओर जाने लगी। मैंने सोचा मैं ठाकुरद्वारे में रहने वाले कुछ विद्यार्थियों से कहूंगी कि मेरी मदद करें। मैं कुछ ही क़दम चल पायी थी कि बग़लवाले एक घर में, खिड़की के दासे पर बैठे किसी पुरुष ने मुझसे पूछा कि इतनी रात गये मैं कहां जा रही हूं। मैंने बताया कि मैं चाहती हूं कि मेरे पति की देह उठवाने में कोई मेरी मदद करे। उसने कहा कि आठ बज चुके हैं, इस वक़्त कोई मेरी सहायता नहीं करेगा। मैं कटरे की ओर जाने लगी... कुछ क़दम आगे बढ़ने पर एक बुज़ुर्ग, एक जगह बैठा हुक्का पी रहा था। उसके निकट ही दो-तीन आदमी सोये पड़े थे। मैंने अपनी विपदा कह सुनायी और हाथ बांधकर उनसे भी सहायता की मांग की। ... पर उनका भी वही जवाब था कि दस बज चुके हैं, हम गोली खाने के लिए तैयार नहीं हैं।

मैं लौट आयी और अपने पति की लाश के पास जा बैठी। अचानक ही बांस की एक खपची मेरे हाथ लग गयी जिससे मैं रातभर कुत्तों को भगाती

रही। मैंने तीन आदमियों को दर्द से कराहते-छटपटाते देखा। पास ही एक भैंस दर्द से तड़प रही थी। और बारह साल का एक लड़का जो दर्द से परेशान था, बार-बार मुझसे आग्रह कर रहा था कि मैं उसे छोड़कर कहीं नहीं जाऊं। मैंने उसे बताया कि मैं अपने पति की देह को छोड़कर कहीं नहीं जाऊंगी। मैंने पूछा कि उसे ठंड तो नहीं लग रही है, कि उसे ओढ़ने के लिए कुछ चाहिए। मैं अपना दुपट्टा उसे ओढ़ा सकती थी। उसने पानी मांगा। पर पानी उस जगह पर कहीं नहीं मिल सकता था।

मुझे हर एक घंटे के बाद बड़े घड़ियाल की टन-टन सुनाई देती। रात दो बजे एक ज़ख़्मी आदमी ने जिसकी एक टांग लाशों के ढेर में फंसी पड़ी थी मुझसे याचना की कि मैं उसकी टांग को ऊंचा उठा दूं। वह सुलतान नाम के गांव से आया कोई जाट था। मैं उठी और ख़ून से सने उसके कपड़ों को पकड़ उसकी टांग ऊपर उठा आयी। उसके बाद, सुबह साढ़े पांच बजे तक वहां कोई नहीं आया। लगभग छः बजे, लाला सुंदरदास अपने बेटों के साथ, और हमारी गली के कुछ लोग एक चारपाई लेकर आये और मैं अपने पति की देह को घर पर ले आयी। बाग़ में मैंने और लोग भी देखे जो अपने मित्रों-संबंधियों को ढूंढ़ रहे थे।

मैंने सारी रात वहां बिता दी थी। मैं अपनी भावनाओं को बयान नहीं कर सकती। ढेरों लाशें मेरे आस-पास पड़ी थीं... उनमें कुछेक मासूम बच्चे थे। ... रात भर उस बियाबान में कुत्तों के भौंकने और गधों के रेंकने के सिवा कुछ सुनाई नहीं पड़ता था ... मैं और ज्यादा क्या कहूं? जैसे मैंने वह रात काटी है, उसे या तो मैं जानती हूं, या भगवान जानता है।

जलियांवाला बाग़—यह नाम सुनते ही प्रत्येक भारतवासी के तन-बदन में रोमांच-सा होने लगता है। पर इस घटना की पूरी कहानी आज बहुत कम लोग जानते हैं। हत्याकांड कैसे घटा और हमारे स्वतंत्रता आंदोलन के इतिहास में इसका क्या महत्व है—इसी की कहानी है आगे के पन्नों में।

असंतोष से उपजा विद्रोह

बैसाखी के दिन घटनेवाली जलियांवाला बाग़ की घटना कोई अलग-थलग घटना नहीं थी। बहुत पहले से ही अंग्रेज़ी शासन के प्रति भारतवासियों का अविश्वास बढ़ता आ रहा था और वे विदेशी शासन की गुलामी से मुक्त होना चाहते थे।

पहले विश्वयुद्ध (1914-18) के समय यह असंतोष की भावना और भी तेज़ हो चुकी थी। उसका प्रमुख कारण यह था कि जंग के दौरान ब्रिटिश सरकार, अपने अधिकार के बल पर, भारत से हर प्रकार की सहायता लेती रही थी। सरकार के अधिकारी, पुलिस के सिपाहियों को साथ लेकर देहात में पहुंच जाते और गांवों में से युवकों को ज़बर्दस्ती अंग्रेज़ी फ़ौज में भरती कराने पकड़-पकड़कर ले आते। जहां एक ओर, सैनिक भरती किये गये वहीं दूसरी ओर, भारत में से जंग के लिए दस करोड़

पाउंड का 'जंगी कर्ज़' भी उठाया गया। उधर, आयात-निर्यात पर असर होने से कीमतें बहुत बढ़ गयीं।

लोगों की परेशानी का यहीं पर अंत नहीं था। विश्वयुद्ध के दौरान, जो चार वर्ष तक चलता रहा, भारत में तरह-तरह की बीमारियां फूटती रहीं—हैज़ा, मलेरिया, प्लेग, इंफ्लुएंज़ा आदि। इंफ्लुएंज़ा का तो ऐसा प्रकोप हुआ कि दो साल के अंदर लगभग डेढ़ करोड़ लोग मारे गये। परंतु ब्रिटिश सरकार की ओर से रोगियों की देख-रेख और इलाज के लिए कोई संतोषजनक प्रबंध नहीं किया गया था।

और, दुर्भाग्य की बात, 1918 में बरसात न के बराबर हुई जिससे कई स्थानों पर अकाल की सी स्थिति पैदा हो गयी। उधर अनाज कम पैदा हो रहा था, इधर कीमतें बढ़ती जा रहा थीं। ऐसी स्थिति में देश अशांत हो उठा था। जगह-जगह पर प्रदर्शन होने लगे थे और लोग अपने अधिकारों के लिए आवाज़ उठाने लगे थे।

सन् 1918 में विश्वयुद्ध समाप्त हुआ। जंग में ब्रिटेन विजयी हुआ।

परंतु जंग के बाद ब्रिटिश सरकार का व्यवहार सहानुभूतिपूर्ण होने के बजाय द्वेषपूर्ण हो उठा। जंग के दौरान ब्रिटिश सरकार ने घोषणा की थी कि जंग के बाद वह भारत के प्रशासन में सुधार करेगी , भारतवासियों को सहूलतें देगी। पर सुधार करने के बजाय वह दमन की नीति अपनाने लगी।

उस समय इस बढ़ते असंतोष ने तीन विद्रोही आंदोलनों का रूप ले लिया। इनमें से दो आंदोलनों की तैयारी तो देश के बाहर हुई और तीसरे की भारत के अंदर।

ग़दर आंदोलन

देश के बाहर जिस विद्रोह की तैयारी की गयी, उसमें ग़दर आंदोलन का नाम प्रमुख है। उन दिनों बहुत से भारतवासी, रोज़गार की खोज में अमेरिका और कनाडा आदि देशों में जाकर बस गये थे। इनके साथ समानता का व्यवहार नहीं किया जाता था, जिससे वे अपमानित महसूस करते थे।

सन् 1913 में कनाडा में एक संगठन की स्थापना हुई। इस संगठन ने शीघ्र ही 'ग़दर' नाम से एक पत्रिका निकाली जिसके पहले अंक में ही लिखा था : "आज से बाहर के देशों में ब्रिटिश राज के विरुद्ध युद्ध का आरंभ होता है। हमारा नाम क्या है? —ग़दर! हमारा काम क्या है? —ग़दर! यह ग़दर कहां पर फूटेगा? — भारत में।" पत्रिका के पन्ने-पन्ने पर सशस्त्र विद्रोह का आह्वान किया गया था।

इसी बीच 19 सितंबर 1914 को 'कामागाटामारू' जहाज की घटना घटी। इस घटना में कनाडा में प्रवेश पाने में असफल भारतीय प्रवासियों पर गोली चलायी गयी, जिससे 18 मारे गये और 25 घायल हुए। लगभग

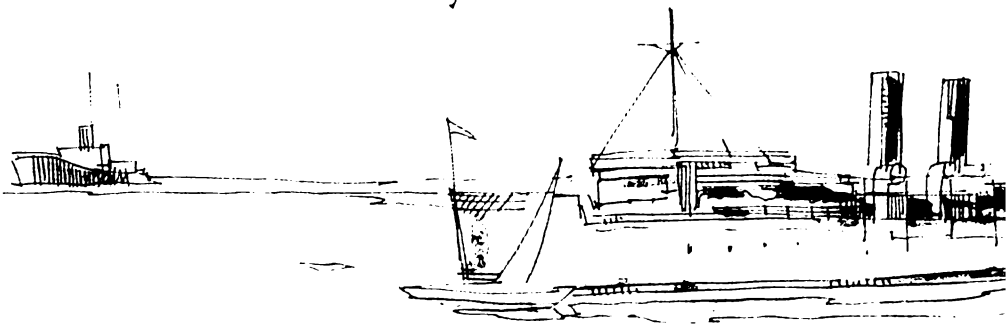

200 प्रवासियों को कैद कर लिया गया और वे वर्षों तक कारावास की यंत्रणाएं सहते रहे। इसकी ख़बर मिलने पर देश-विदेश में रहने वाले भारतीयों के बीच ग़म और गुस्से की लहर दौड़ गयी।

इधर, सशस्त्र विद्रोह के उद्देश्य से फरवरी 1915 तक लगभग आठ हज़ार प्रवासी लुक-छिपकर भारत पहुंच चुके थे और गुप्त रूप से छावनियों में काम करने लगे थे। पर विद्रोह नहीं हो पाया। बहुत से आंदोलनकारी पकड़ लिये गये और जेलों में डाल दिये गये। इस तरह ग़दर पार्टी का आंदोलनकारी क्रियाकलाप समाप्त हुआ।

ख़िलाफ़त आंदोलन

अंग्रेज़ों के ख़िलाफ भारत के बाहर उठनेवाले आंदोलनों में एक और आंदोलन था—ख़िलाफ़त आंदोलन। इसकी शुरुआत तुर्की में हुई थी। इस आंदोलन ने भारी संख्या में भारत के मुसलमानों को आकृष्ट किया था,

और ब्रिटेन-विरोधी होने के कारण वह, एक तरह से भारत के अंदर चलने वाले स्वतंत्रता संग्राम से जुड़ गया था।

पहले विश्वयुद्ध में तुर्की ने ब्रिटेन के ख़िलाफ़ 'जिहाद' का ऐलान कर दिया था। तुर्की का सुलतान उस समय विश्वभर के मुसलमानों का नेता—ख़लीफ़ा—माना जाता था। साथ ही वह एक बहुत बड़े साम्राज्य का मुखिया था। इस कारण, ख़िलाफ़त आंदोलन विश्वव्यापी लहर की भांति तेजी से फैला। भारत में, बहुत से मुस्लिम नेताओं ने इस ब्रिटेन-विरोधी आंदोलन में बड़ी सरगर्मी से भाग लेना शुरू कर दिया। गांधी जी ने भी इस ख़िलाफ़त आंदोलन का स्वागत किया था। जर्मनी और तुर्की की मदद से भारत को आज़ाद कराने की योजनाएं बनने लगीं। एक 'आर्मी ऑफ गॉड' का भी संगठन किया गया। पर यह योजना भी विफल रही। कुछ गुप्त पत्र अगस्त 1916 में पंजाब सरकार के हाथ लग गये; वह सतर्क हो गयी और आंदोलन आगे नहीं बढ़ पाया।

भारत की भीतरी स्थिति

भारत के अंदर उस समय क्या चल रहा था? देश के अंदर उस समय होम रूल आंदोलन ज़ोर पकड़ रहा था। इस आंदोलन का नेतृत्व अलग-अलग से भारत के दो विलक्षण व्यक्ति कर रहे थे—एक थे लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक और दूसरी थीं आयरलैंड की रहनेवाली श्रीमती ऐनी बेसेन्ट। जिस कार्यप्रणाली की ओर इन नेताओं ने प्रेरित किया वह भारतीय जनता के स्वभाव तथा उस समय की भारतीय स्थितियों के अधिक अनुकूल थी। एक तो इस आंदोलन के नेता खुलकर, खुलेआम बात करते थे,

बाल गंगाधर तिलक

श्रीमती ऐनी बेसेन्ट

लुक-छिप कर काम नहीं करते थे। दूसरे, इनका आंदोलन सशस्त्र आंदोलन न होकर शांतिपूर्ण आंदोलन था।

होम रूल आंदोलन तेजी से फैला। ब्रिटिश सरकार इसे दबाने के मनसूबे बनाने लगी। लोकमान्य तिलक ने, जो लंबे समय तक जेल में रह चुके थे, अप्रैल 1916 में अपने होम रूल आंदोलन का सूत्रपात किया। उधर, श्रीमती ऐनी बेसेन्ट को गिरफ़्तार कर लिया गया और मद्रास में स्थित होम लीग के छापेखाने को भी जब्त कर लिया। यह 1917 की गर्मियों की बात है। जंग अभी ख़त्म नहीं हुई थी। श्रीमती ऐनी बेसेन्ट की गिरफ़्तारी से देश भर में गुस्से की लहर दौड़ गयी।

उन्हीं दिनों अमेरिका भी अंग्रेज़ों के पक्ष में विश्वयुद्ध में शामिल हो गया था। इसके बाद अमेरिका के तत्कालीन राष्ट्रपति विलसन ने ब्रिटिश सरकार को यह परामर्श दिया कि भारत में बढ़ते असंतोष से निबटने के लिए ब्रिटिश सरकार को अपनी नीति में कुछ सुधार करना चाहिए। इस सुझाव को मानते हुए ब्रिटिश सरकार ने 20 अगस्त 1917 को यह घोषणा की कि भारत के प्रशासन में सुधार किये जायेंगे। इस घोषणा का यह असर हुआ कि होम रूल आंदोलन में शिथिलता आ गयी। भारतवासियों के दिल में इस बात की आशा बंधने लगी कि जंग के बाद उनकी स्थिति में सुधार होगा। पर वास्तव में ब्रिटिश सरकार के घर में कुछ और ही पक रहा था। दिसंबर 1917 में ब्रिटिश सरकार ने एक राजद्रोह समिति (Sedition Committee) की नियुक्ति की जिसे रौलेट कमिटी के नाम से जाना जाता है।

जुलाई 1918 में इस कमिटी की रिपोर्ट छप कर आयी। इस रिपोर्ट में भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन को गुंडों का आंदोलन कहा गया था, जो लूटपाट और हत्याएं करते हैं। इसमें यह दिखाने की कोशिश की गयी थी कि भारत के देशभक्त अराजकतावादी हैं, लूटपाट, आगजनी और मारकाट में विश्वास करते हैं, कि उनसे समाज को बहुत बड़ा खतरा है और भारत में शांति भंग होने का डर है।

उस रिपोर्ट में कहा गया था कि ऐसे अपराधी तत्वों को दबाकर रखने में मुश्किल पेश आ रही है इसलिए नये कानून बनाने की जरूरत है। इन कानूनों के तहत जंग के दौरान नागरिकों के हकों पर लगी पाबंदियां जंग के बाद भी जारी रहने वाली थीं। कमिटी की रिपोर्ट को लागू करने के लिए दो नये कानून प्रस्तावित किये गये । पहले के तहत प्रेस पर कड़ा

नियंत्रण रखा जा सकता था। दूसरे के तहत गिरफ़्तार किये गये भारतीयों को कोर्ट में पेश किये बग़ैर दो साल तक कारावास में रखा जा सकता था।

देश भर में इन प्रस्तावों की भर्त्सना की जाने लगी। पत्र-पत्रिकाओं में टिप्पणियां छपने लगीं। जगह-जगह विरोध सभाएं होने लगीं। पर ब्रिटिश सरकार टस से मस न हुई।

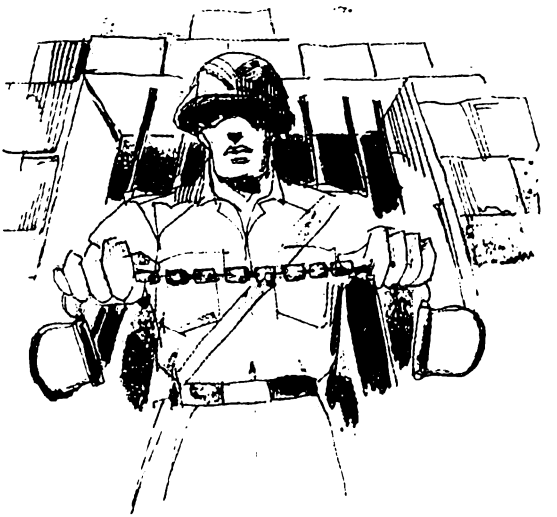

गांधी जी का प्रवेश

ऐन उसी समय, भारत के राजनैतिक क्षितिज पर गांधी जी प्रकट हुए।

यदि उस समय गांधी जी देश के स्वाधीनता संग्राम में नहीं उतरे होते और उसकी बागडोर उनके हाथ में नहीं आयी होती तो हमारे संघर्ष की दिशा और स्वरूप कुछ दूसरा ही होता। उस समय होम रूल आंदोलन में मुख्यतः भारत के विचारवान, पढ़े-लिखे, मध्यवर्गीय लोग शामिल थे। अभी तक जनसाधारण का विशाल समुदाय उसके साथ नहीं जुड़ा था। दूसरी ओर छिटपुट क्रांतिकारी कार्रवाइयां की जा रही थीं जिनमें कई युवक भाग ले रहे थे।

गांधी जी का आग्रह था कि हर काम खुलकर हो, कहीं भी छिपाव-दुराव न हो। दूसरे, यह संघर्ष मात्र प्रस्ताव पास करने या वाइसराय तथा ब्रिटिश सरकार के उच्चाधिकारियों तक अपने विरोध-पत्र तथा याचिकाएं पहुंचाने से हटकर, सीधा देश के गली-कूचों में जनांदोलन का

रूप ले। इसमें हड़ताल, जलसे, जुलूस और लंबे अर्से तक चलने वाले कार्यक्रम शामिल थे।

इस आंदोलन ने असहयोग आंदोलन का रूप ले लिया और गांधी जी के इस कार्यक्रम के प्रभाव से इस संग्राम में शामिल होने के लिए विशाल स्तर पर साधारण जन सामने आने लगे। गांधी जी का विचार था कि जब तक देश के लाखों-लाख निवासी, सचेत रूप से इस स्वाधीनता संग्राम से नहीं जुड़ते, तब तक यह स्वाधीनता संग्राम आगे नहीं बढ़ सकता।

गांधी जी के स्वाधीनता संग्राम की सारी परिकल्पना ही नयी और अनूठी थी। उनका विश्वास शस्त्रास्त्रों में नहीं था। वह अहिंसात्मक ढंग से लड़ाई लड़ने के हक़ में थे। इस संघर्ष में हिंसा का प्रयोग कदापि न हो, देशभक्त भले ही स्वयं यातनाएं झेलें, पर विरोधी पर हमला नहीं करें, बल्कि अपनी कुरबानी द्वारा उसे इस बात का यकीन दिलाएं कि विरोधी का व्यवहार अन्यायपूर्ण है। वे विरोधी का हृदय परिवर्तन करने में विश्वास रखते थे। गांधी जी का विश्वास आत्मबल में था—एक ओर जहां वे ब्रिटिश सरकार के कानून भी नहीं मानना चाहते थे और उनका डटकर विरोध करते थे, दूसरी ओर वे किसी प्रकार की हिंसा का प्रयोग भी नहीं करना चाहते थे।

लोगों में ऐसी मानसिकता पैदा करना कि दुश्मन आप पर भले ही गोली चलाये, आप गोली का जवाब गोली से नहीं देंगे, और फिर भी आप अपना असहयोग आंदोलन जारी रखेंगे—ऐसी दृढ़ता, ऐसी मानसिकता पैदा करना बहुत बड़ी उपलब्धि थी। इसी को गांधी जी सत्याग्रह का नाम देते थे।

रौलेट बिल

20 फरवरी 1919 को गांधी जी ने वाइसराय के प्राइवेट सेक्रेटरी को एक पत्र लिखा, जिसमें उन्होंने रौलेट बिल के विरुद्ध अपने सत्याग्रह के संभावी कार्यक्रम के बारे में उसे सूचित किया। यह एक अनहोनी बात थी।

वाइसराय की ओर से कोई उत्तर नहीं मिला।

23 फरवरी को गांधी जी ने घोषणा कर दी कि वे शीघ्र ही अपना सत्याग्रह आंदोलन आरंभ कर देंगे। उसके दूसरे ही दिन, अपने सहयोगियों के साथ उन्होंने सत्याग्रह की शपथ ली और तुरंत ही वाइसराय के प्राइवेट सेक्रेटरी को तार द्वारा सूचित कर दिया कि वे अपने आंदोलन का संचालन किस प्रकार करेंगे।

ब्रिटिश सरकार ने फिर भी कोई उत्तर नहीं दिया।

1 मार्च 1919 को सत्याग्रह आंदोलन का सूत्रपात हुआ। उस दिन गांधी जी ने पत्र-पत्रिकाओं में पत्र के रूप में एक बयान जारी किया, जिसमें सत्याग्रह की शपथ भी शामिल थी। इस शपथ के कुछेक अंश थे :

यह मानते हुए कि दोनों रौलेट प्रस्ताव अन्यायपूर्ण और व्यक्ति के सामान्य अधिकारों का दमन करनेवाले हैं, हम पूरी गंभीरता से इस बात की प्रतिज्ञा करते हैं कि इन्हें वापिस नहीं लिये जाने पर हम इनका पालन करने से इन्कार कर देंगे। ... साथ ही साथ हम शपथ लेते हैं कि अपने संघर्ष में हम पूरी निष्ठा के साथ, सत्य का अनुसरण करते हुए किसी प्रकार की हिंसा का प्रयोग नहीं करेंगे, न व्यक्ति के प्रति, न जान-माल के प्रति।

इसके फ़ौरन ही बाद गांधी जी देश की यात्रा पर निकल पड़े। वे जगह-जगह, दिल्ली, बंबई, उत्तर प्रदेश, मद्रास, आदि में घूमे। उन्होंने विशाल स्तर पर जनसंपर्क किया और लोगों को अपने कार्यक्रम के बारे में बताया। अपने कथनों में विशेष रूप से उन्होंने इस बात पर बल दिया कि उनके आंदोलन का मूल मंत्र अहिंसा है।

साथ ही, 11 मार्च 1919 को उन्होंने वाइसराय के प्राइवेट सेक्रेटरी को इस आशय का तार भी दिया कि अभी भी वक़्त है, सरकार रौलेट प्रस्तावों को कानून का रूप देने में जल्दबाजी नहीं करे, लोकमत का आदर करे; लोकमत के सामने झुकने से सरकार की गरिमा बढ़ेगी ही, कम नहीं होगी।

ब्रिटिश सरकार ने गांधी जी की एक नहीं सुनी, और 18 मार्च 1919 को दो रौलेट प्रस्तावों में से एक को कानून बना दिया गया जो अब कुख्यात रौलेट एक्ट के नाम से जाना जाता है।

तुरंत ही सत्याग्रह की भावना बड़े ज़ोरों से देश में फैलने लगी। 24 मार्च 1919 को गांधी जी ने घोषणा की कि जब किसी देश की जनता यह महसूस करने लगे कि अमुक कानून राष्ट्रीय अपमान के बराबर है तो उसका विरोध करना उसका परम कर्त्तव्य बन जाता है। ... भारत की जनता हिंसा से घृणा करती है। वर्तमान परिस्थितियों में वह अपने दिल में किसी प्रकार की दुर्भावना, द्वेषभाव अथवा तिरस्कार की भावना को जगह दिये बिना अपना विरोध प्रकट करेगी।

आंदोलन का शुभारंभ, गांधी जी ने एक दिन की भूख हड़ताल से किया। यह एक राजनैतिक संघर्ष के लिए बड़ी अनूठी सी चीज़ थी। इसने देश की जनता को गहराई से प्रभावित तथा उत्प्रेरित किया।

ब्रिटिश शासकों का कहना था कि सत्याग्रह आंदोलन से ब्रिटिश साम्राज्य के लिए बहुत बड़ा ख़तरा पैदा हो गया है। उनका कहना था कि साम्राज्य को अफ़गानिस्तान, सोवियत रूस, तुर्की तथा अन्य देशों से भी ख़तरा है, और भारत के अंदर यह ख़तरा सशस्त्र विद्रोहियों से है। इसलिए ब्रिटिश शासन के लिए दमनकारी नीति अपनाना अनिवार्य हो गया था, ऐसा उनका मत था। परंतु वास्तव में ये सभी दलीलें सरासर झूठ थीं। विश्वयुद्ध में ब्रिटेन विजयी रहा था, अब उसके लिए कहां से ख़तरा पैदा हो सकता था? फिर भी, ब्रिटिश सरकार ने सत्याग्रह आंदोलन को 'मुजरिमाना साज़िश' का नाम दिया और कहा कि सत्याग्रह का मूल

उद्देश्य देश के कानून को भंग करना है, कि शांतिपूर्ण हड़ताल भी गैर कानूनी है क्योंकि इससे लोगों की भावनाएं भड़क उठेंगी।

बस इतना ही नहीं। गांधी जी को बदनाम करने की कोशिश की जाने लगी। कहा जाने लगा कि गांधी विदेशों से मदद ले रहा है, कि अफ़गान, रूसी, तुर्क, जर्मन इसकी मदद कर रहे हैं और ग़दर पार्टी के बचे-खुचे आंदोलनकारी भी गांधी की पीठ पर हैं। यहां तक कहा गया कि जापानी तथा रूसी क्रांतिकारियों ने अमृतसर को अपनी सरगर्मियों का अड्डा बना लिया है और सत्याग्रह आंदोलन का संचालन जर्मनी कर रहा है, आदि आदि।

ये कहानियां इस उद्देश्य से गढ़ी जा रही थीं कि जब ब्रिटिश सरकार गांधी जी के शांतिपूर्ण आंदोलन पर हमला बोले तो ऐसा लगे कि दमनकारी कार्रवाई करना उसके लिए अनिवार्य हो गया था।

पंजाब की स्थिति

इस देशव्यापी सत्याग्रह के परिप्रेक्ष्य में उस समय पंजाब की क्या स्थिति थी?

सत्याग्रह आंदोलन देश भर में फैल रहा था। पर पंजाब इसकी धुरी बन गया था। पंजाब की जनता बड़े उत्साह से इसमें शामिल हो रही थी। रौलेट प्रस्तावों के विरुद्ध सबसे अधिक प्रदर्शन और जलसे भी पंजाब में ही होने लगे थे।

इसे देखकर पंजाब का अंग्रेज़ लेफ़्टिनेंट गवर्नर माइकल ओ'ड्वायर अचंभे में पड़ गया था। ओ'ड्वायर बड़े गर्म मिज़ाज का, उद्दंड सा व्यक्ति था। पहले तो वह समझे बैठा था कि पंजाब के लोग ब्रिटिश हुकूमत का विरोध नहीं करेंगे क्योंकि जंग के दिनों में ब्रिटिश सरकार को सब से अधिक सहायता पंजाब से मिली थी। अब उसे लगने लगा कि पंजाबवासियों ने उसके साथ विश्वासघात किया है क्योंकि सबसे कड़ा विरोध पंजाब में

ही उठ रहा था। यहां तक कि अमृतसर का नाम एक विद्रोही नगर के रूप में लिया जाने लगा था।

पंजाब में अमृतसर नगर का अपना महत्व रहा है। उस समय नगर की आबादी तो लगभग ड़ेढ़ लाख थी, पर वह सिखों का सब से बड़ा धर्मस्थान था। इसके अलावा व्यापार का बहुत बड़ा केंद्र होने के नाते यह देश के अन्य महत्वपूर्ण नगरों से जुड़ा हुआ था।

लेफ़्टिनेंट गवर्नर माइकल ओ'ड्वायर

स्वाधीनता संग्राम में नये-नये नेता उभरकर सामने आने लगे थे। अमृतसर के ही दो नाम उन दिनों लोगों की जबान पर थे, एक युवा डा. किचलू का जो जर्मनी से बैरिस्टर बन कर आये थे और दूसरा डा. सत्यपाल का, जो व्यवसाय से तो डाक्टर थे पर तन-मन से स्वाधीनता संग्राम में सक्रिय हो गये थे। ये दोनों ही नेता कांग्रेस के सदस्य थे।

कुछ ही समय पहले, दिसंबर 1918 में ये दोनों नेता कांग्रेस अधिवेशन में भाग लेने गये थे और वहां कांग्रेस की कार्यकारिणी को न्योता दे आये थे कि कांग्रेस का अगला अधिवेशन पंजाब में हो। उनका प्रस्ताव मंजूर कर लिया गया था। इससे नगर में दोनों नेताओं की लोकप्रियता और प्रभाव खूब बढ़ गये थे।

डा. किचलू

डा. सत्यपाल

इससे पहले भी, रौलेट प्रस्तावों के विरुद्ध तथा स्थानीय मामलों को लेकर ये युवा नेता बड़ी गर्मजोशी से काम कर रहे थे। और अब तो गांधी जी के सत्याग्रह को लेकर पंजाब भर में बड़ा जोश और उत्साह पाया जाने लगा था।

21 मार्च 1919 की बात है, अमृतसर की एक पत्रिका 'वक़्त' में एक कार्टून छपा जिसमें जंग के बाद भारत के साथ की जा रही बेइंसाफी कर टिप्पणी की थी। कार्टून में, ब्रिटेन के सेक्रेटरी ऑफ़ स्टेट फ़ार इंडिया, भारत को 'आज़ादी की सनद' (मेडल) देने जा रहे हैं। मिस्टर रौलेट अपना बैग खोलते हैं और उसमें से सनद की जगह एक काला नाग भारतवासियों पर छोड़ते हैं। इस कार्टून को देखकर पंजाब का लेफ़्टिनेंट गवर्नर माइकल ओ'ड्वायर आग बबूला हो उठा।

कैसा था जलियांवाला बाग़?

यह मैदान पंजाब के नगर अमृतसर में स्थित है। किसी ज़माने में पंडित जल्ला नाम के व्यक्ति ने वहां एक बाग़ बनवाया था और जल्ला के नाम पर ही उसका नाम जलियांवाला बाग़ प्रचलित हो गया था।

सन् 1919 में वह एक वीरान सा ऊबड़-खाबड़ ज़मीन का टुकड़ा भर रह गया था। धीरे-धीरे उसके चारों ओर मकान बन चुके थे और घरों की पीठ बाग़ की ओर थी। इस मैदान का प्रयोग जलसों और जनसभाओं के लिए किया जाने लगा था। शहर की ओर से आने वाली चार-पांच गलियां, बाग़ में खुलती थीं। एक रास्ता बाज़ार की ओर से अंदर दाख़िल होता था, पर वह भी तंग रास्ता था। वहां पर मैदान की ज़मीन थोड़ी ऊंची थी।

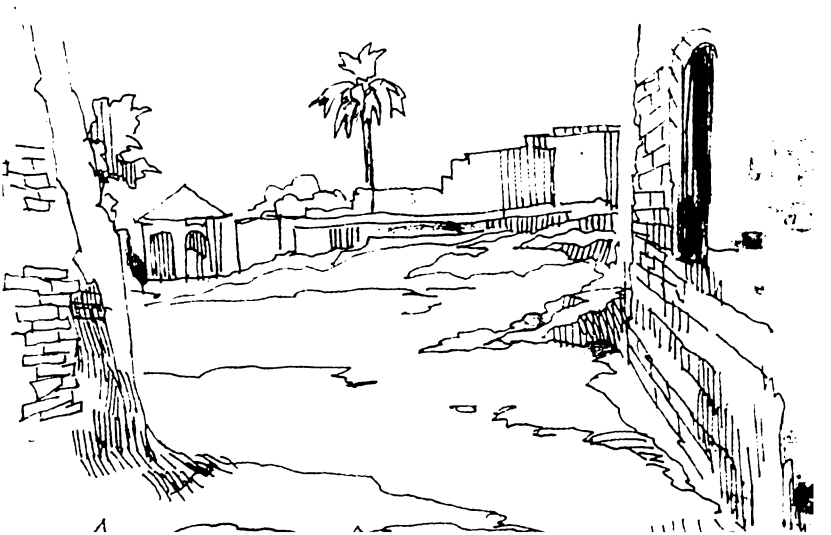

उसी समय रौलेट प्रस्ताव को कानून बना दिया गया था और गांधी जी ने तत्काल ही देशव्यापी हड़ताल के लिए 30 मार्च की तिथि तय कर दी थी, पर बाद में यह सोचकर कि हड़ताल की तैयारी के लिए ज़्यादा वक़्त की ज़रूरत होगी, तारीख़ को आगे सरकाकर, 6 अप्रैल का दिन निश्चित किया गया। लेकिन तिथि बदलने की सूचना अमृतसर तथा अनेक अन्य स्थानों पर समय से नहीं पहुंच पायी।

29 मार्च 1919

29 मार्च को, सायं 4.30 बजे, जलियांवाला बाग़ के मैदान में एक जलसा हुआ जिसमें हज़ारों की संख्या में लोगों ने भाग लिया। जलसे का उद्देश्य था अगले दिन, यानी 30 मार्च को होने वाली हड़ताल का प्रबंध करना। ब्रिटिश अधिकारियों ने बाद में यह इलज़ाम लगाया कि जलसे में लोगों को सरकार के ख़िलाफ़ भड़काया गया है। पर वास्तव में एक भी आपत्तिजनक शब्द नहीं कहा गया था।

जलसे में डा. सत्यपाल सब से पहले बोले। उन्होंने बड़े स्पष्ट और प्रभावी शब्दों में लोगों से शांति बनाये रखने और शांतिपूर्ण ढंग से हड़ताल करने का आग्रह किया और कहा कि एक शब्द भी पुलिस अथवा सरकार के ख़िलाफ़ मुंह से नहीं निकलने पाये, कि हड़ताल केवल सरकार की दमनकारी नीतियों के विरुद्ध अपना क्षोभ व्यक्त करने के लिए बुलाई जा रही है। उन्होंने यह भी कहा कि जंग के दिनों में भारत ने ब्रिटिश सरकार की यथाशक्ति मदद की थी, जबकि उसका ईनाम भारत को यह मिला कि गुलामी की जंजीरों को और ज़्यादा कसा जाने लगा है।

इसके बाद डा. किचलू बोले। उन्होंने कहा कि जंग के दिनों में ब्रिटेन की सरकार ने भारत की वफ़ादारी को सराहा था और इसीलिए सुधारों के संबंध में घोषणा की थी। उन्होंने कहा कि हमारा ध्येय होम रूल है, वैसा ही होम रूल जैसा ब्रिटेन के अन्य स्वशासित राज्यों में पाया जाता है।

डा. किचलू ने अंत में कहा :

> हम पुलिस को तथा अफ़सरशाही को कोई नुकसान पहुंचाना नहीं चाहते। गांधी जी का फ़रमान है कि तुम पुलिस अथवा सरकारी अमले पर हाथ नहीं उठाओगे, भले ही वे हिंसा पर उतर आयें।

गिरिधारी लाल नाम के एक सज्जन ने, जो जलसे की सदारत कर रहे थे, अपने भाषण में अगले दिन की हड़ताल का ज़िक्र करते हुए कहा कि उस हड़ताल में शामिल होने के लिए किसी से ज़ोर-ज़बर्दस्ती नहीं की जायेगी; जिसके मन में आये हड़ताल में शामिल हो, जिसका मन न माने, भले ही वह हड़ताल से दूर रहे।

30 मार्च 1919

30 मार्च का दिन आया। सभी जातियों और धर्मों के लोग एक दूसरे से गले मिल रहे थे। लोगों ने अपने आप ही दूकानें बंद कर दी थीं। सब काम ठप्प हो गया था। एक तांगा तक नहीं चल रहा था। मुकम्मल हड़ताल थी। दूसरे दिन अख़बारों में इसकी ख़बर बड़ी-बड़ी सुर्ख़ियों के साथ छपी। उसी दिन शाम को जलियांवाला बाग़ में सार्वजनिक सभा हुई। डा. किचलू ने उसकी अध्यक्षता की। सभा का वक्त शाम 4.30 बजे का था, पर सभा

4 बजे से कुछ पहले ही शुरू कर दी गयी क्योंकि चालीस हजार से अधिक लोग इकट्ठा हो गये थे।

इस सार्वजनिक सभा में भाषणों के अतिरिक्त दो प्रस्ताव पारित किये गये। एक, जिसमें ज़ोरदार शब्दों में रौलेट एक्ट की भर्त्सना की गयी और मांग की गयी कि उसे वापिस ले लिया जाये। दूसरे प्रस्ताव में निर्णय लिया गया कि सभा की सूचना तार द्वारा गांधी जी तथा पत्र-पत्रिकाओं को तत्काल भेजी जाये।

ऐसी ही हड़ताल दिल्ली में भी हुई। वहां पर भी देशव्यापी हड़ताल की तारीख़ बदल दिये जाने की ख़बर वक्त पर नहीं पहुंच पायी थी। दिल्ली में कुछेक हिंसात्मक घटनाएं घट गयीं। हड़ताल के दिन कुछ स्वयंसेवक रेलवे स्टेशन पर गये। वे चाहते थे कि रेलवे रेस्तरां के कर्मचारी भी हड़ताल में शमिल हो जायें। पर कर्मचारियों ने नहीं माना और उनके बीच झगड़ा उठ खड़ा हुआ। बात बढ़ गयी। कुछ ही देर में रेलवे पुलिस वहां पहुंच गयी और उसने भीड़ पर गोली चला दी। आठ आदमी मारे गये और इससे दुगुने ज़ख़्मी हुए।

उसी शाम दिल्ली में एक सार्वजनिक सभा हुई। स्वामी श्रद्धानंद उसके प्रधान थे। वहां भी पुलिस पहुंच गयी। पर स्वामी जी के विश्वास दिलाने पर कि शांति भंग नहीं होगी, पुलिस वहां से हट गयी। परंतु स्वामी श्रद्धानंद के भाषण के बाद जब लोग उनके नेतृत्व में एक जुलूस की शक्ल में जाने लगे तो सशस्त्र पुलिस ने उनका रास्ता रोक लिया। स्वामी जी ने अपनी छाती नंगी करते हुए पुलिस को ललकारा कि उन पर गोली चलाये। तभी, घोड़े पर सवार एक अधिकारी वहां पहुंचा और उसने पुलिस को वहां से हट जाने का आदेश दिया।

अगले दिन, 31 मार्च की शाम को दिल्ली में बहुत बड़े जुलूस न में उन मृतकों की अर्थी निकाली गयी जो पुलिस की गोली का निश थे। निश्चय ही दिल्ली की घटनाओं ने पंजाब के लोगों की भावन भी उद्वेलित किया।

हिन्दू-मुस्लिम भ्रातृभाव के दृश्य

निम्न उद्धरण उस रिपोर्ट में से लिया गया है जो 4 अप्रैल 1919 को "बाम्बे क्रानिकल" के दिल्ली स्थित संवाददाता ने भेजी थी :

> "कल रात कुछ मुसलमान व्यापारियों ने अपने हस्ताक्षरों के साथ इस आशय का नोटिस जारी किया कि दिल्ली की त्रासदी में दिवंगत शहीदों की आत्मा की शांति के लिए पढ़े जाने वाले फ़ातिहा में सभी लोग शरीक हों जो जुम्मा की नमाज़ के बाद जामा मस्जिद में अदा की जायेगी। यह ख़बर फैलने लगी कि इस प्रार्थना सभा में हिन्दू भी शामिल होने का इरादा रखते हैं। ...गत शुक्रवार को यथासमय नमाज़ अदा की गयी और इसमें पंद्रह हज़ार से अधिक मुसलमानों ने भाग लिया था। सामान्यतः इतनी अधिक संख्या में लोग जुम्मा की नमाज़ में शरीक नहीं होते। नमाज़ के बाद जो कुछ देखने को मिला उसे इस्लाम और भारत के इतिहास की एक विलक्षण घटना कहा जा सकता है। हज़ारों की संख्या में हिन्दू प्रार्थना सभा में भाग लेने के लिए पहुंचे थे, जिन्हें मुसलमानों ने बड़े आदरभाव और खुले दिल से मस्जिद में अपने साथ जगह दी।

---

2 अप्रैल 1919

उन्हीं दिनों गांधी जी के एक अनुयायी, स्वामी सत्यदेव नाम के एक सज्जन, पंजाब की यात्रा पर आये और जगह-जगह आत्मबल की महत्ता पर व्याख्यान देते रहे। 2 अप्रैल को, जलियांवाला बाग़ के ही मैदान में स्वामी सत्यदेव ने 7000 श्रोताओं के सम्मुख भाषण दिया। उन्होंने बार-बार लोगों को समझाया कि किसी हालत में भी दंगा-फसाद की नौबत नहीं आनी चाहिए, न ही अधिकारियों के विरुद्ध कोई अपशब्द मुंह से निकलना चाहिए।

5 अप्रैल 1919

6 अप्रैल को फिर हड़ताल होनी थी। माइकल ओ'ड्वायर ने अपनी ओर से पूरी कोशिश की कि हड़ताल नहीं हो पाये। डा. किचलू पर पाबंदी लगा दी कि वह किसी भी सभा में भाषण नहीं दे सकते। गांधी जी पर पाबंदी लगा दी गयी कि वे पंजाब में दाख़िल नहीं हो सकते। अमृतसर के डिप्टी कमिश्नर ने 5 अप्रैल के दिन नागरिकों की एक बैठक बुलायी जिसमें बहुत से राय बहादुर, खान बहादुर आदि सरकार के पक्षधर शामिल थे। बैठक में अंग्रेज़ डिप्टी कमिश्नर ने उपस्थित लोगों से अपील की कि 6 अप्रैल की हड़ताल को नहीं होने दिया जाये। वह उपस्थित लोगों की सहमति लेने में सफल हो गया और अमृतसर में ख़बर फैल गयी कि 6 अप्रैल को हड़ताल नहीं होगी।

जब कांग्रेस के युवा कार्यकर्ताओं को इसकी ख़बर मिली तो वे बहुत

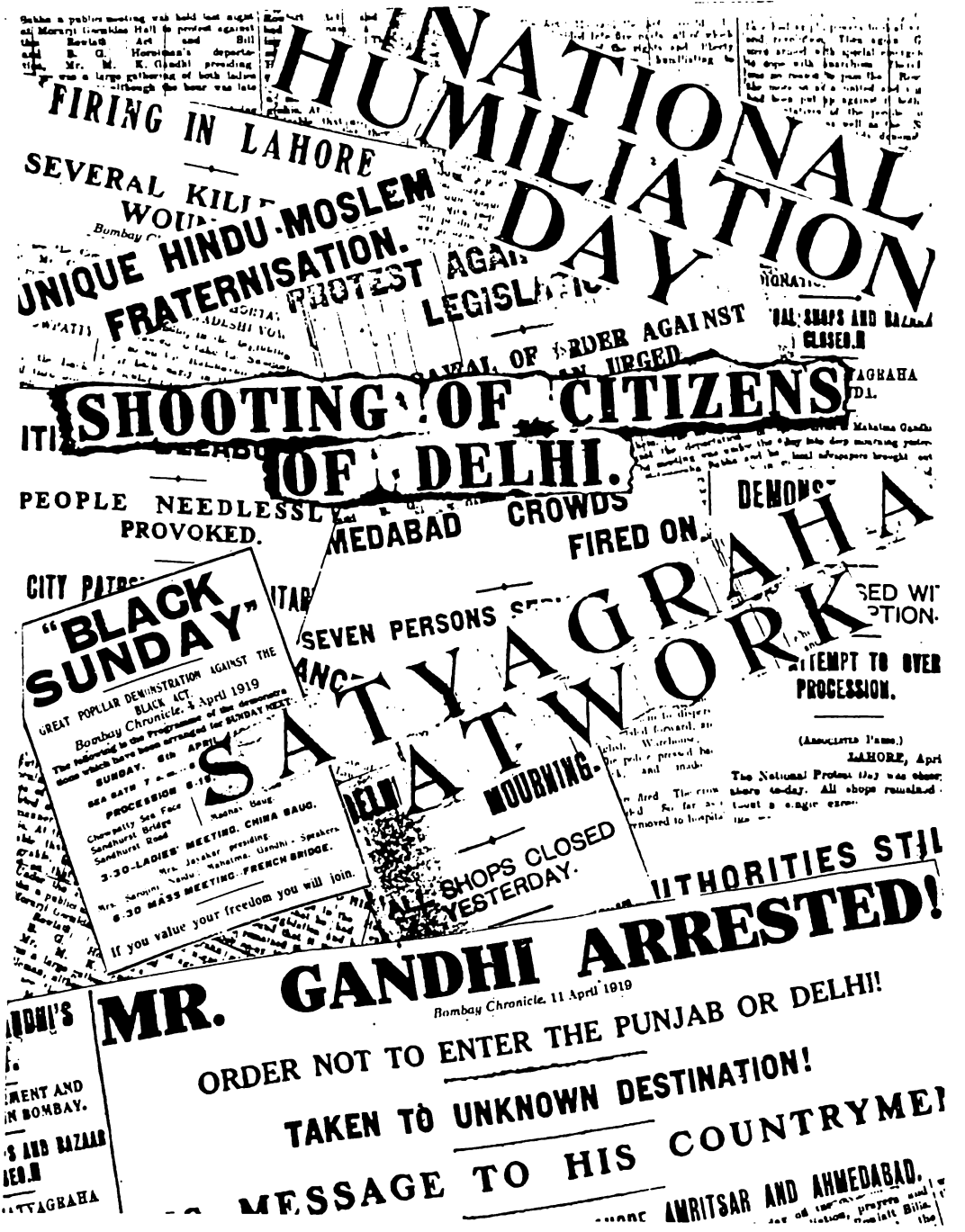

NATIONAL HUMILIATION DAY
FIRING IN LAHORE
SEVERAL KILLED
UNIQUE HINDU-MOSLEM FRATERNISATION.
PROTEST AGAINST
LEGISLATION
SHOOTING OF CITIZENS OF DELHI.
PEOPLE NEEDLESSLY PROVOKED.
CROWDS FIRED ON.
"BLACK SUNDAY"
GREAT POPULAR DEMONSTRATION AGAINST THE BLACK ACT.
Bombay Chronicle, 4 April 1919
SEVEN PERSONS
SATYAGRAHA
SATYAGRAHA AT WORK
PROCESSION.
MOURNING.
SHOPS CLOSED YESTERDAY.
If you value your freedom you will join.
AUTHORITIES STILL
MR. GANDHI ARRESTED!
Bombay Chronicle, 11 April 1919
ORDER NOT TO ENTER THE PUNJAB OR DELHI!
TAKEN TO UNKNOWN DESTINATION!
MESSAGE TO HIS COUNTRYMEN
AMRITSAR AND AHMEDABAD.

बौखलाये। उन्होंने मिलकर फ़ैसला किया कि वे घर-घर जाकर लोगों को सूचित करेंगे कि हड़ताल रद्द नहीं की गयी है, कि हड़ताल अवश्य होगी। उस दिन एक जगह पर क्रिकेट मैच खेला जा रहा था, जिसे हज़ारों दर्शक बैठे देख रहे थे। डा. किचलू और डा. सत्यपाल शाम होते-होते वहां जा पहुंचे और दर्शकों के पास पहुंच-पहुंचकर उन्हें सूचित कर आये कि अगले दिन शहर में हड़ताल अवश्य होगी।

6 अप्रैल 1919

अगले दिन हड़ताल खूब जमकर हुई। यहां तक कि छोटे-छोटे दूकानदार, खोमचेवाले और दूध-दही बेचनेवाले भी हड़ताल में शामिल हो गये। वह पूर्णतः शांतिपूर्ण थी।

उसी शाम जलियांवाला बाग़ में सार्वजनिक सभा हुई जिसमें पचास हज़ार लोग शामिल हुए। भाषणों, कविताओं आदि के अतिरिक्त तीन प्रस्ताव पारित किये गये। एक में ब्रिटिश सम्राट से अनुरोध किया गया कि रौलेट एक्ट को वापिस लिया जाये। दूसरे में पंजाब के लेफ़्टिनेंट गवर्नर से आग्रह किया गया कि वह डा. किचलू और डा. सत्यपाल पर से भाषण संबंधी पाबंदी हटा दे। तीसरे में सत्याग्रह आंदोलन की भूरि-भूरि प्रशंसा की गयी और एक सत्याग्रह समिति स्थापित करने का सुझाव पेश किया गया।

अंत में, बैरिस्टर बदर-उल-इस्लाम अली ख़ान ने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा :

महात्मा गांधी ने हमें शिक्षा दी है और तदनुसार हम पूरे धैर्य और सहिष्णुता

से सभी तरह के दुख और क्लेश झेलेंगे। झूठ का नाश होगा और सत्य की विजय होगी। यदि आप शांति से रहेंगे, धैर्य रखेंगे, बर्दाश्त करने की क्षमता रखेंगे तो इसका सब पर गहरा असर होगा। पर यदि कहीं पर मामूली सी भी गड़बड़ हुई, यदि कहीं दो आदमी ही भिड़ गये, तो इसका बुरा परिणाम होगा और सभा प्रभावहीन रह जायेगी। इसलिए श्रोताओं से निवेदन है कि वे शांतिपूर्ण ढंग से विसर्जित हों, और किसी क़िस्म का कोई जुलूस नहीं निकालें, न ही कोई प्रदर्शन करें।

गांधी जी ने घोषणा की थी कि वे अपना सत्याग्रह आंदोलन 6 अप्रैल की देशव्यापी हड़ताल के बाद 7 अप्रैल को आरंभ कर देंगे। 6 अप्रैल की हड़ताल सफल और शांतिपूर्ण रही थी। परंतु सत्याग्रह के शुभारंभ के तीसरे ही दिन अमृतसर में स्थिति बिगड़ने लगी, और इसके पीछे मुख्यतः अंग्रेज़ लेफ़्टिनेंट गवर्नर का हाथ था।

7 अप्रैल 1919

7 अप्रैल को गांधी जी ने 'सत्याग्रही' नाम का एक पत्रक निकाला। इस पत्रक के लिए सरकार से इजाज़त नहीं ली गयी थी और इसका पंजीकरण भी नहीं किया गया था। यह इंडियन प्रेस कानून का उल्लंघन था। पत्रक में गांधी जी ने भावी सत्याग्रहियों तथा जनसामान्य के पढ़ने के लिए चार पुस्तकों की सिफ़ारिश की थी। उसमें सिविल नाफ़रमानी (Civil Disobedience) इतनी भर थी कि इन चारों पुस्तकों पर ब्रिटिश सरकार ने प्रतिबंध लगा रखा था। ये पुस्तकें थीं : *हिन्द स्वराज्य, सर्वोदय अथवा विश्वव्यापी प्रभात, सत्याग्रह की कहानी* और *मुस्तफ़ा कमाल पाशा की*

जीवनी तथा योगदान। इनमें से पहली तीन पुस्तकें स्वयं गांधी जी ने लिखी थीं।

इन पुस्तकों के चयन के पीछे धारणा यह थी कि सत्याग्रहियों का प्रशिक्षण भी होता जाये कि जनसेवा की इच्छा रखनेवाले लोग अपनी कठिनाइयों से कैसे पार पा सकते हैं; साथ ही, उनके सामने ऐसी किताबें रखी जायें जो सत्याग्रह की अवधारणा के अनुरूप हों, जिनमें किसी प्रकार की भी हिंसा को मान्यता अथवा प्रोत्साहन नहीं दिया गया हो।

उस दिन पंजाब के लेफ़्टिनेंट गवर्नर ने लाहौर में लेजिस्लेटिव काउंसिल की बैठक में भाग लिया। बैठक के अंत में, उन्होंने धमकी देते हुए पत्र-पत्रिकाओं तथा राजनैतिक कार्यकर्ताओं को चेतावनी दी कि जो कुछ वे लिख या बोल रहे हैं, उसके लिए उन्हें कभी क्षमा नहीं किया जायेगा।

8 अप्रैल 1919

उधर, 8 अप्रैल को अमृतसर के डिप्टी कमिश्नर ने लाहौर के कमिश्नर को अमृतसर की स्थिति के बारे में एक लंबा पत्र लिखा। उसने उस पत्र की एक प्रति लेफ़्टिनेंट गवर्नर, माइकल ओ'ड्वायर को भी भेज दी। पत्र का एक अंश यहां दिया जाता है :

> हमें अपना अधिकार जमाने के लिए, आज नहीं तो कल, कोई न कोई कार्रवाई करनी होगी। हम हड़ताल पर प्रतिबंध लगा सकते हैं, जुलूसों को रोक सकते हैं, जिनमें शांति भंग होने का डर हो, पर इसके लिए फ़ौजी ताकत को लाना नितांत आवश्यक है। हमें लोगों पर यह भी स्पष्ट कर देना होगा कि अमृतसर में हुकूमत किस के हाथ में है। हमें ऐसा प्रबंध करना होगा कि ज़रूरत पड़ने पर, छः घंटे के नोटिस पर फ़ौजी दस्ता हमारे पास पहुंच जाये। ...हमारे राय

बहादुर और खान बहादुर सब निकम्मे साबित हुए हैं, उन्हें तो जिंदा लाशें ही समझो। ...मैं इस कोशिश में हूं कि नये लीडरों से संपर्क स्थापित करूं। मैंने सोचा था कि डा. किचलू को अपनी ओर लाने की कोशिश करूंगा। परंतु वह आदमी दिलो-दिमाग से आंदोलन के साथ जुड़ा हुआ है।...

9 अप्रैल 1919

अमृतसर में यदि शांतिपूर्ण वातावरण बना हुआ था तो उसका एक बहुत बड़ा कारण हिंदू-मुस्लिम एकता भी थी। एक एकताबद्ध राष्ट्र की भावना लोगों को बांधे हुए थी। इस भावना का स्पष्ट उदाहरण 30 मार्च और 6 अप्रैल को मिल चुका था।

9 अप्रैल को रामनवमी का पर्व था। अमृतसर की जनता ने इसे 'राष्ट्रीय एकता दिवस' के रूप में मनाने का निश्चय किया। दोपहर को जुलूस निकला जिसमें भारी संख्या में मुसलमानों ने भी भाग लिया। हिंदू देवी-देवताओं की जय-जयकार के साथ-साथ 'महात्मा गांधी

की जय!' 'हिंदू-मुसलमान की जय!' के नारे गूंज रहे थे।

इस आंदोलन में भारतवासियों की कैसी मानसिकता थी, इसका एक विलक्षण उदाहरण इस मौके पर देखने को मिला। अमृतसर का अंग्रेज़ डिप्टी कमिश्नर, इलाहाबाद बैंक के बरामदे में खड़ा रामनवमी के जुलूस को देख रहा था। विचित्र बात यह थी कि जब भी कोई बैंड पार्टी उसके सामने से गुज़रती हुई उसे पहचान लेती तो वह रुक जाती और God Save the King की धुन बजाती, जो अंग्रेज़ों का राष्ट्रीय गीत है। इससे साफ़ ज़ाहिर होता है कि अंग्रेज़ों के प्रति हिंदुस्तानियों के दिल में कोई द्वेषभाव नहीं था। बल्कि वे उनकी राष्ट्रीय धुन को बड़े आदरभाव से बजा रहे थे।

जुलूस शांतिपूर्ण ढंग से संपन्न हुआ। हालांकि अनेक नेताओं पर प्रतिबंध लगाया गया था कि वे भाषण नहीं दे सकते, कहीं कोई गड़बड़ नहीं हुई। अनेक यूरोपीय लोग खुलेआम अमृतसर की सड़कों पर घूम-फिर रहे थे, उन्हें किसी ने किसी भी तरह परेशान नहीं किया।

अंग्रेज़ लेफ़्टिनेंट गवर्नर के पास खबर पहुंची कि रामनवमी का कार्यक्रम शांतिपूर्ण ढंग से संपन्न हुआ है। फिर भी, उसने डा. किचलू और डा. सत्यपाल को गिरफ़्तार करने का हुक्म दे दिया और उन्हें धर्मशाला (हिमाचल प्रदेश का एक पहाड़ी नगर) भेज देने का फैसला कर लिया। उसे उम्मीद थी कि ऐसा उत्तेजक क़दम उठाने पर अमृतसर के लोग भड़क उठेंगे, जिससे उसे कार्रवाई करने का मौका मिल जायेगा। उसने 13 अप्रैल तक भारी संख्या में अमृतसर में, फ़ौजी टुकड़ियां मंगवाने का भी प्रबंध कर लिया, जिस दिन वह शहर में कोई 'भयानक' क़दम उठाने वाला था।

जगह-जगह पुलिस तैनात कर दी गयी।

10 अप्रैल 1919

10 अप्रैल को ही डा. किचलू और डा. सत्यपाल को डिप्टी कमिश्नर के घर पर बुलाया गया और वहीं से दोनों को मोटरकार में बिठाकर धर्मशाला के लिए रवाना कर दिया गया।

माइकल ओ'ड्वायर ने इस बात का निश्चय भी कर लिया कि गांधी जी को अमृतसर और दिल्ली में प्रवेश नहीं करने दिया जायेगा। एक और आदेश के अनुसार गांधी जी को सूचित किया गया कि वे बंबई के बाहर नहीं जा सकते । इन हुक्मनामों के बावजूद गांधी जी पंजाब के लिए रवाना हो गये। जब रास्ते में उन्हें रोका गया तो उन्होंने हुक्म मानने से इन्कार कर दिया। उन्होंने कहा, "मैं, एक ज़रूरी निमंत्रण पर पंजाब जा रहा हूं। मैं वहां अशांति फैलाने नहीं, बल्कि शांति बहाल करने जा रहा हूं। मुझे खेद है, मैं इस आदेश का पालन नहीं कर सकता।"

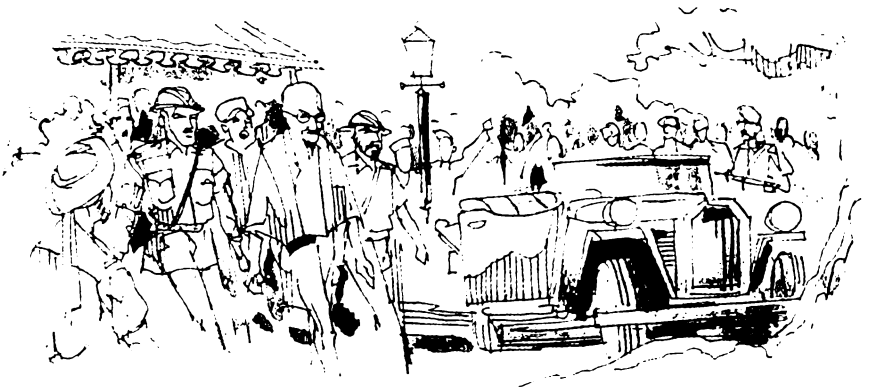

पलवल स्टेशन पर गांधी जी को रेलगाड़ी में से उतार लिया गया। उन्हें जब बंबई की ओर जानेवाली गाड़ी में बिठाया जा रहा था, तब उन्होंने देशवासियों के नाम एक अपील जारी की--"मेरी गिरफ़्तारी पर रुष्ट न हों। और कोई ऐसी बात नहीं करें, जो असत्य अथवा हिंसा द्वारा दूषित की गयी हो।"

यह सोचकर कि गांधी जी की गिरफ़्तारी से लोगों में बेचैनी फैलेगी जिससे कहीं न कहीं हिंसात्मक घटनाएं हो सकती हैं, अधिकारी पहले से ही अपनी कार्रवाई करने के लिए तैयार हो गये। अमृतसर के क़िले में हुक्म दिया गया कि तोपों का मुंह 'सही दिशा' में मोड़ दिया जाये, 'अगर भीड़ किले की ओर बढ़े या रेलवे स्टेशन की ओर बढ़े तो बेधड़क गोली चला दी जाये'।

डा. किचलू और डा. सत्यपाल की गिरफ़्तारी की ख़बर फैलने की देर थी कि शहर भर में हड़ताल हो गयी, कांग्रेस के कार्यकर्ता लोगों को दूकानें बंद कर के एचिसन पार्क में इकट्ठा होने का आग्रह करने लगे। उनका अभिप्राय यह था कि एचिसन पार्क में इकट्ठा होकर, सब लोग डिप्टी कमिश्नर के घर पर जायेंगे और उन दोनों नेताओं की रिहाई की मांग करेंगे।

साढ़े ग्यारह बजे के आस-पास दूकानें बंद होने लगीं और लोग हॉल-बाजार में इकट्ठा होने लगे। शीघ्र ही लोगों की भीड़ हॉल दरवाज़े में से होती हुई, हॉल ब्रिज तक जा पहुंची, जिसके दूसरे सिरे पर घुड़सवार पुलिस की एक टुकड़ी पहले से तैनात थी।

अभी तक कहीं कोई गड़बड़ी नहीं हुई थी। यहां तक कि जब लोगों की भीड़ टाऊन हॉल के पास से गुज़र रही थी तो कुछेक अंग्रेज़ व्यक्ति

भीड़ के सामने आ गये थे। लेकिन किसी ने उनसे कुछ नहीं कहा। पर हॉल ब्रिज के दूसरे सिरे पर घुड़सवार टुकड़ी ने भीड़ को रोका और आगे बढ़ने से मना किया। इस पर भीड़ में से कुछ लोगों ने आगे बढ़ने की कोशिश की। भीड़ में से ही बहुत से लोग उन्हें रोकने की भी कोशिश कर रहे थे। इस दौरान डिप्टी कमिश्नर इरविंग और कैप्टेन मेसी भी मौक़े पर पहुंच गये। पुलिस की एक और टुकड़ी भी पहुंच गयी। तभी दो फ़ौजी सैनिक घोड़ों पर से उतरे। उन्होंने एक ओर खड़े होकर मोर्चा बांधा और भीड़ पर गोली चला दी। कुछ लोग वहीं ढेर हो गये, कुछ ज़ख़्मी हुए। भीड़ वहीं की वहीं खड़ी रह गयी।

एक बजे के करीब डिप्टी पुलिस सुपरिंटेंडेंट प्लोमर वहां पहुंच गया। उसके साथ पुलिस के 24 सिपाही और 7 घुड़सवार थे। पुलिस भीड़ की ओर बढ़ने लगी, उनकी बंदूकों के आगे किरचें लगी थीं। भीड़ पीछे हटने लगी। तभी वहां पैदल फ़ौज की टुकड़ियां भी पहुंच गयीं।

तब तक भीड़ बुरी तरह से उत्तेजित हो उठी थी। एक ओर वे अपने नेताओं को छुड़ाने में असफल रहे थे, दूसरी ओर उनके साथी हताहत हुए थे। उनके दिलों में गुस्से की आग भड़क उठी थी। फिर भी लोग चुपचाप, अपने हताहत साथियों को उठाकर हॉल बाजार की ओर चल पड़े। तभी ख़बर मिली कि शहर में जगह-जगह चौकियां बैठायी जा रही हैं। इससे उनकी उत्तेजना और बढ़ गयी और उत्तेजित भीड़ कैरेज ब्रिज की ओर लौट पड़ी। अब लोगों ने अपने हाथों में लाठियां और डंडे उठा रखे थे।

पुल के एक ओर उत्तेजित भीड़ थी, जबकि पुल के पार डिप्टी कमिश्नर इरविंग, हथियारबंद फ़ौजियों के साथ खड़ा था। संकट की घड़ी को महसूस

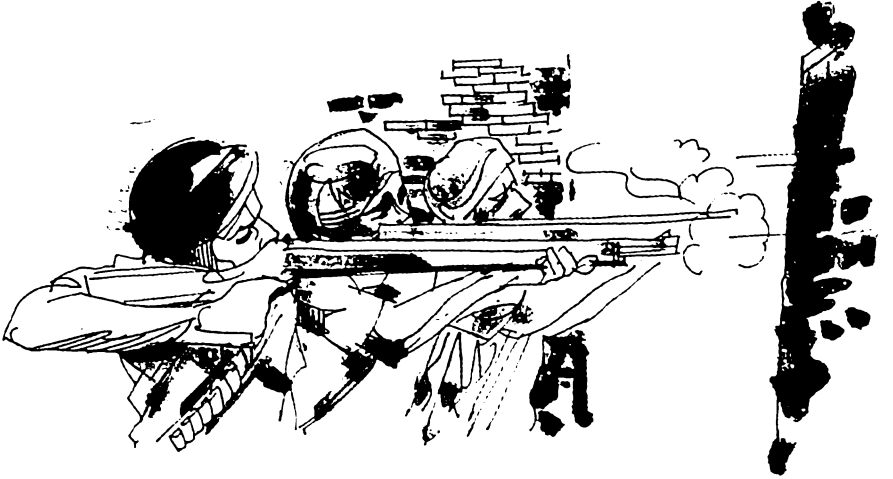

करते हुए दो वकीलों, सलारिया और मकबूल महमूद, ने जनता और अधिकारी, दोनों से शांति बनाये रखने का आग्रह किया। पर भीड़ में से कुछ लोगों ने फ़ौजियों पर पत्थर तथा लकड़ी के टुकड़े फेंके। फ़ौरन ही फ़ौजियों ने गोली चला दी और बीस व्यक्ति मार गिराये। इससे कहीं अधिक ज़ख़्मी हुए। गोली चलाने से पहले कोई चेतावनी नहीं दी गयी थी। दोनों वकील बाल-बाल बचे। मकबूल महमूद भागता हुआ सिविल अस्पताल गया ताकि हताहत लोगों को स्ट्रेचरों पर अस्पताल पहुंचाया जा सके। पर अंग्रेज़ अधिकारी प्लोमर ने हुक्म दे दिया कि अस्पताल से कोई सहायता नहीं दी जाये।

लोग गुस्से से पागल हो रहे थे। कुछ लोगों ने तारघर पर धावा बोल दिया और तार अधिकारी को उसके घर से खींचकर बाहर ले आये। पर रेलवे स्टेशन से एक फ़ौजी टुकड़ी तारघर की हिफ़ाज़त के लिए भेजी गयी थी, और उसने तार अधिकारी को बचा लिया।

उसी समय कुछ लोगों ने रेलवे माल-गोदाम पर धावा बोल दिया। स्टेशन सुपरिंटेंडेंट मुश्किल से बच पाया पर एक गार्ड लोगों के हाथों मारा गया। तीन और अंग्रेज़ नेशनल बैंक में मारे गये। लोगों ने बैंक की इमारत में आग लगा दी। बैंक का गोदाम जिसमें कपड़ों के थान भरे पड़े थे, लूट लिया गया। एक और बैंक, एलायंस बैंक के अंग्रेज़ मैनेजर को मार डाला गया और ख़जाने को लूट लिया गया। चार्टर्ड बैंक पर भी हमला हुआ, पर मैनेजर और उसके सहायक को उनके हिंदुस्तानी कर्मचारियों ने बचा लिया। इसी तरह एक अंग्रेज़ महिला, मिस शेरवुड पर भी आक्रमण किया गया। पर एक भारतीय उन्हें बचाने में सफल हुआ। और भी कुछ इमारतों को आग लगायी गयी, लूट-पाट भी हुई, कुछ और जानें भी गयीं।

सवाल उठता है कि क्या इस तरह भीड़ पर गोली चलाना उचित था?

बाद में अमृतसर के डिप्टी कमिश्नर इरविंग ने स्वीकार भी किया कि गोलीकांड से पहले भीड़ में अंग्रेज़ों के प्रति कोई विरोध-भावना नहीं थी। उसने स्वयं कबूल किया कि भीड़ पर गोली चलाना भूल थी :

> लोगों ने जो सहसा अंग्रेज़ों पर हमला बोल दिया तो, यह सर्वथा अप्रत्याशित था। यह उन्माद उनमें गोली चलाये जाने के बाद भड़क उठा था। वरना भीड़ को घुड़सवार पुलिस तथा सैनिकों द्वारा रोका जा सकता था।

अब तो धड़ाधड़ फ़ौजी दस्ते अमृतसर पहुंचने लगे। 10 अप्रैल की शाम को लेफ्टिनेंट गवर्नर को अमृतसर की घटनाओं की सूचना मिली। उसने फ़ौरन कमिश्नर किचिन को अमृतसर रवाना कर दिया।

11 अप्रैल 1919

11 अप्रैल को अमृतसर में मार्शल लॉ लागू कर दिया गया। तदनुसार, किसी भी अर्थी या लाश के साथ चार से अधिक व्यक्ति नहीं जा सकते थे। बाद में यह संख्या बढ़ाकर आठ कर दी गयी थी। जुलूसों और सभाओं पर मुकम्मल पाबंदी लगा दी गयी थी। जहां कहीं चार से अधिक व्यक्ति खड़े हों, उन पर गोली चलाई जा सकती थी। मृतकों की अर्थियां पंद्रह-पंद्रह मिनट के अंतराल पर ज़्यादा से ज़्यादा आठ व्यक्तियों द्वारा अंत्येष्टि के लिए ले जायी जा सकती थीं...।

लोग क्षुब्ध हो उठे। वे अपने मृतकों की अर्थियां अंत्येष्टि के लिए नाती-रिश्तेदारों के साथ ले जाना चाहते थे। पर प्रशासन का रुख़ दूसरा ही था। उनका रवैया यह था कि अंग्रेज़ों को मारा गया है, ख़ून का बदला ख़ून से लिया जायेगा। जहां कहीं हुक्म का उल्लंघन हुआ, फ़ौजी ताकत का इस्तेमाल किया जायेगा। यहां तक कि अमृतसर पर बमबारी भी की जा सकती थी।

उन दिनों अमृतसर में जाने-माने अंग्रेजों में एक मि. वाथन भी थे, जो एक कालेज में प्रिंसीपल थे। उन्होंने संयम और विवेक से काम लेने का आग्रह किया। पर डिप्टी कमिश्नर चिल्ला कर बोला, "बातें करना बंद करो। हमने अपने मृतकों की अधजली लाशें देखी हैं। हमारा मिज़ाज अब पहले जैसा नहीं रहा।"

बाद में उसके रवैये में कुछ नर्मी भी आयी। पर फिर भी हुक्म था कि दो बजे दोपहर तक अंत्येष्टि का सारा काम समाप्त हो जाना चाहिए। दो बजे बिगुल बजेगा। यदि भीड़ तितर-बितर नहीं हुई तो पंद्रह मिनट के बाद गोली चला दी जायेगी।

11 अप्रैल की शाम को ब्रिगेडियर जनरल आर.ई.एच. डायर, जो जालंधर ब्रिगेड का कमांडर था, अमृतसर पहुंच गया।

जनरल डायर

12 अप्रैल 1919

दूसरे दिन, अर्थात् 12 अप्रैल को इस जनरल डायर ने 125 अंग्रेज़ और 310 भारतीय सैनिकों के साथ शहर में मार्च किया। रास्ते में एक जगह पर भीड़ जमा थी, जिसे तितर-बितर करने में कुछ कठिनाई सामने आयी। परंतु लोग शीघ्र ही सामने से हट गये।

शाम को 4 बजे हिंदू सभा हाई स्कूल में एक मीटिंग हुई। इस मीटिंग में फ़ैसला हुआ कि अगले दिन जलियांवाला बाग़ में सार्वजनिक सभा होगी, जिसमें वे पत्र पढ़कर सुनाये जायेंगे जो डा. सत्यपाल और डा. किचलू की ओर से प्राप्त हुए थे। मीटिंग में आह्वान किया गया कि जनता और ज़्यादा कुर्बानियां देने के लिए तैयार रहे; अगले दिन भी हड़ताल रहेगी और वह उस दिन तक जारी रहेगी जब तक उनके नेता डा. किचलू और डा. सत्यपाल रिहा नहीं कर दिये जाते।

हत्याकांड

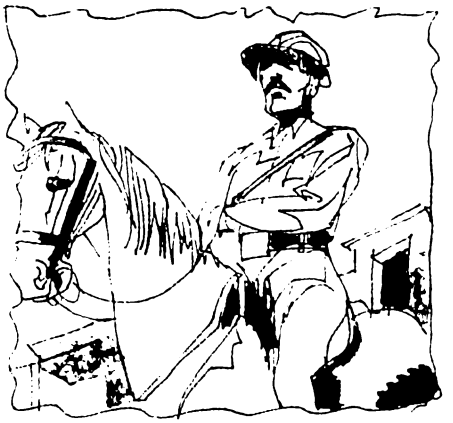

13 अप्रैल को बैसाखी का पर्व था। सन् 1699 में इसी दिन गुरु गोविन्द सिंह ने खालसा पंथ की नींव रखी थी। अमृतसर में यह पर्व विशेष उत्साह के साथ मनाया जाता है।

परंतु उस दिन बैसाखी के पर्व पर माहौल कुछ दूसरा ही था। पिछले चार दिन से हड़ताल चल रही थी। हर रोज़ उन मृतकों की अर्थियां निकल रही थीं जिन्हें 10 अप्रैल के दिन गोली का निशाना बनाया गया था।

अंग्रेज़ हाकिम जानते थे कि बैसाखी के दिन हज़ारों की संख्या में लोग स्वर्ण मंदिर जायेंगे और चूंकि जलियांवाला बाग़ नज़दीक ही पड़ता था, वे लोग वहां से उठकर जलियांवाला बाग़ में भी ज़रूर पहुंचेंगे।

13 अप्रैल की प्रातः जनरल डायर ने फिर से अपनी ताकत का प्रदर्शन करते हुए शहर में मार्च किया। जगह-जगह पर ढोल बजाया जाता, और

जब आस-पास से लोग इकट्ठा हो जाते तो यह घोषणा की जातीः

अमृतसर का कोई भी नागरिक बिना पास के शहर के बाहर नहीं जा सकता। कोई भी नागरिक शाम 8 बजे के बाद अपने घर के बाहर नहीं निकल सकता। 8 बजे के बाद बाहर निकलनेवाले को गोली का निशाना बना दिया जायेगा। कोई जुलूस नहीं निकाला जा सकता। जहां कहीं 4 से ज़्यादा व्यक्ति इकट्ठा होंगे, उसे ग़ैरक़ानूनी करार दिया जायेगा और ज़रूरत हुई तो फ़ौजी ताकत से उन्हें तितर-बितर किया जायेगा।

जनरल डायर के मार्च के फ़ौरन ही बाद, कुछेक युवक सड़क पर निकल आये और ढोल की जगह टीन का एक ख़ाली कनस्तर बजाते हुए जगह-जगह घोषणा करते गये कि शाम 4.30 बजे जलियांवाला बाग़ में आम सभा होगी।

दोपहर 12.40 का वक़्त था। डायर अभी शहर में ही था जब उसे सूचना मिली कि उसकी घोषणा का कोई विशेष असर नहीं हुआ था, कि शाम 4.30 बजे, जलियांवाला बाग़ में सार्वजनिक सभा होगी, जिसकी सूचना पूरे शहर में दी जा रही थी।

फिर क्या था, शहर में जगह-जगह पुलिस और सेना की चौकियां बैठा दी गयीं। यह कर चुकने के बाद भी जनरल डायर के पास 400 सैनिक बच रहे थे।

2 बजे के बाद ही जलियांवाला बाग़ में लोग इकट्ठा होने लगे थे। 4 बजे डायर को खबर मिली कि भारी संख्या में लोग जलियांवाला बाग़ में पहुंच गये हैं।

जनरल डायर फ़ौरन ही तैयार हो गया और अपने सैनिकों की टुकड़ी लेकर जलियांवाला बाग़ के लिए रवाना हो गया। आगे-आगे उसकी

मोटरकार थी। उसके साथ मोटर में उसका चहेता अफ़सर कैप्टन ब्रिग्स बैठा था। कार के पीछे दो बख़्तरबंद गाड़ियां थीं। उनके पीछे पुलिस की कार थी, जिसमें पुलिस सुपरिंटेंडेंट रिहिल और प्लोमर बैठे थे।

रास्ते में पांच स्थानों पर चालीस-चालीस सैनिकों की चौकियां बैठायी गयीं। एक सैनिक टुकड़ी जो जनरल डायर के साथ सीधी बाग़ के अंदर तक गयी।उसमें 50 हिंदुस्तानी सैनिक थे, जिनके पास बंदूकें थीं, और 40 गोरखा सिपाही थे, जिनके पास केवल खुखरियां थीं।

जैसा कि पहले बताया जा चुका है, जलियांवाला बाग़, ऊबड़-खाबड़ ज़मीन का एक बड़ा-सा मैदान था, जिसके चारों ओर मकान बन चुके थे। केवल दक्षिण की ओर थोड़ी सी जगह ख़ाली थी, पर वहां पर लगभग पांच फुट ऊंची दीवार खड़ी की गयी थी। चार-पांच तंग गलियां मैदान में खुलती थीं। बाज़ार की ओर से जो गली अंदर आती थी, वहां जमीन थोड़ी ऊंची थी। बाग़ के अंदर एक समाधि थी और एक खुले मुंहवाला कुआं था।

डायर अपने फ़ौजी दस्ते के साथ बाज़ार की ओर से बाग़ में दाख़िल हुआ। बाज़ार की ओर से आनेवाला रास्ता इतना तंग था कि बख़्तरबंद गाड़ियां अंदर नहीं जा सकती थीं। डायर ने गाड़ियां बाहर ही छोड़ दीं और बाग़ में दाख़िल हुआ।

उस समय बाग़ में अच्छी-खासी भीड़ जमा थी—लगभग बीस हज़ार लोग मौजूद थे और एक आदमी मंच पर खड़ा भाषण दे रहा था। जलसे की कार्रवाई बड़े शांतिपूर्ण ढंग से चल रही थी। बाग़ के अंदर दाख़िल होते ही सामने वाली ऊंची जमीन पर डायर अपने फ़ौजी दस्ते के साथ खड़ा हो गया। वहां उसने पल भर का भी इंतज़ार नहीं किया। डायर ने

25 बंदूकधारी अपने दायें हाथ और 25 बायें हाथ तैनात किये और भीड़ को बिना कोई चेतावनी दिये गोली चलाने का हुक्म दे दिया।

जलसे में बैठे लोग घबरा गये। उनके लिए भाग निकलने का कोई रास्ता ही नहीं था। भीड़ की भीड़ सहसा उठी और गोलियों की बौछार से बच पाने के लिये भागी। कोई एक ओर तो कोई दूसरी ओर। भगदड़ मच गयी। भीड़ में कुछ ऐसे लोग भी थे जो जंग के दिनों में मोर्चे पर से हो आये थे, वे चिल्ला-चिल्लाकर लोगों से अनुरोध करने लगे कि भागने के बजाय वे सीधा जमीन पर लेट जायें। पर घबराहट और बेचैनी में कौन सुनता था। लोग जिस ओर भी भागकर जाते आगे रास्ता बंद पाते। आगे घरों की दीवारें थीं। और जो बाहर जाने वाले छोटे-छोटे तंग रास्ते थे, उन्हीं रास्तों की ओर सैकड़ों लोग भाग-भागकर जा रहे थे। यह देखकर डायर ने अपने सैनिकों को हुक्म दिया कि उसी दिशा में गोली चलायें जहां लोग भाग निकलने की कोशिश कर रहे थे। कुछ लोग तो गोली का

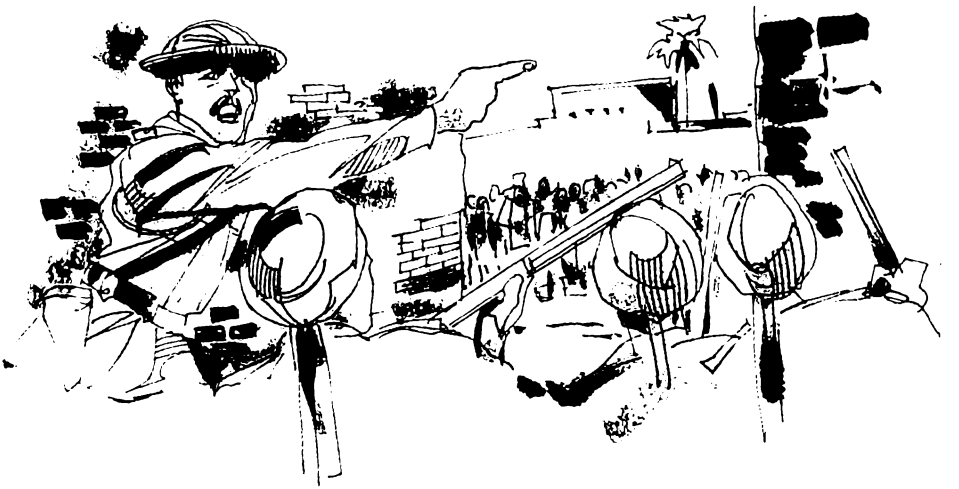

निशाना हुए, कुछ भागते हुए लोगों के पांवों के नीचे कुचले गये। कुछ थे जो पांच फुट ऊंची दीवार को लांघ पाने की कोशिश में गोली खाकर नीचे जा गिरे। कुछ लोग भागते हुए कुएं की ओर गये और उसमें कूद पड़े।

शुरू-शुरू में कुछ फ़ौजियों ने हवा में गोलियां चलायीं, जिस पर जनरल डायर चिल्लाकर बोला :

"नीचे गोली चलाओ! तुम्हें यहां लाया किस लिए गया है ?"

सारा मैदान जलते कुंड के समान हो रहा था। आर्थर स्विनसन नाम के एक व्यक्ति ने उस दृश्य का आंखों देखा हाल इस तरह बयान किया है :

> भाग निकलने की कोशिश में, दोनों ओर के रास्तों पर लोग भाग-भागकर पहुंच रहे थे। गिरते-पड़ते, एक दूसरे को धकेलते, खींचते, पैरों तले रौंदते...। ब्रिग्स की नज़र उस ओर गयी तो उसने डायर का ध्यान उस ओर दिलाया। डायर ने यह समझा कि लोग उस पर हमला करने के लिए इकट्ठा हो रहे हैं। उसने सैनिकों को सीधा उन पर गोली चलाने का हुक्म दिया। उसका भयावह परिणाम निकला। चीख़ते हुए लोग ज़ख़्मी होकर गिरे और लोगों के पांवों तले कुचले गये। कुछ को बार-बार गोलियां लगीं। किसी-किसी जगह पर तो लाशों के ढेर लग गये। गोली लगने पर कोई आदमी गिर जाता तो उसके ऊपर दसियों ज़ख़्मी और गिर जाते।
>
> गोली अभी भी चलायी जा रही थी। ऐसे सैकड़ों लोग थे जो बाहर निकल पाने की उम्मीद न रह जाने पर, दीवार की ओर भागे कि उसे जैसे-तैसे फांद लें, पर दीवार किसी जगह पर पांच फुट ऊंची थी तो किसी जगह इससे भी ज़्यादा ऊंची, सात या दस फुट ऊंची। वे भागते हुए दीवार के पास आते, लेकिन

दीवार में कोई ऐसी जगह न थी जिसे वे पकड़ पाते। कुछ खुशनसीब ऐसे भी थे जो दीवार पर चढ़ने में कामयाब हो गये, पर दूसरे क्षण, पीछे आने वालों ने उन्हें नीचे खींच लिया। गिने-चुने लोग ही दीवार फांद पाये, पर बहुत से लोग, फांदने की कोशिश में ही गोली का निशाना बने; कुछ को तब गोली लगी जब वे दीवार के ऊपर चढ़ चुके थे, और गोली खाकर फिर धड़ाम से नीचे आ गिरे। गोलियों की बौछार में बीस हज़ार लोग फंस गये थे। जहां कुछ मिनट पहले बड़े शांतिपूर्ण ढंग से जलसा चल रहा था, वहां अब चीख-पुकार मची हुई थी।

दस से पंद्रह मिनट तक गोली चलती रही। उस वक़्त तक जब तक कि कारतूस खत्म नहीं हो गये। एक-एक बंदूकधारी ने तैंतीस-तैंतीस गोलियां चलायीं। डायर ने बाद में इस बात को कबूल भी किया कि अगर और गोलियां उपलब्ध होतीं तो वह उन्हें भी उस भीड़ पर ही चलाता।

जनरल डायर अपने फ़ौजी दस्ते के साथ लगभग 5.30 बजे नरक का जलता कुंड पीछे छोड़कर जलियांवाला बाग़ से निकल गया। दो हज़ार के करीब हताहत लोग वहां पड़े थे। अधिकांश पानी के लिए चिल्ला रहे थे, पर पानी तो क्या कहीं से किसी प्रकार की मदद भी उन्हें नहीं मिल सकती थी। ज़ख़्मी लोग जगह-जगह, दम तोड़ रहे थे। डर के मारे कोई डाक्टर अंदर नहीं जा रहा था। ऐसे लोग भी अंदर जाने से डर रहे थे, जिनके मित्र-संबंधी जलसे में भाग लेने के लिए आए हुए थे। कुछ ज़ख़्मी लोग रेंग-रेंगकर गलियों तक पहुंच पाये, पर फिर, आगे नहीं बढ़ पाये और अपने ही खून में लथ-पथ गलियों में ही ढेर होते गये।

कुछ देर बाद, अपने मित्र-संबंधियों को खोजते हुए अमृतसर के डरे-सहमे निवासी बाग़ के अंदर घुसे। पर शीघ्र ही रात पड़ गयी। वे अंधेरे

में कैसे अपने प्रियजनों को ढूंढ़ पाते ? विशेष रूप से जब जगह-जगह लाशों के ढेर पड़े थे। फिर 8 बजे के बाद कोई बाहर नहीं निकल सकता था। कुछ लोगों को तो अपने संबंधी मिल गये और वे उन्हें वहां से उठा ले गये, पर 8 बजते ही, सभी लोग बाग़ से निकल आये और ज़ख़्मी लोग बाग़ के खुले मैदान में ही कराहते पड़े रहे। कहते हैं एक हज़ार के करीब ज़ख़्मी लोग रातभर जलियांवाला बाग़ में ही पड़े रहे। कुछ का तो इतना खून बह गया कि सुबह तक ज़िंदा ही नहीं रह पाये...।

पर जनरल डायर अभी भी संतुष्ट नहीं था। उस दिन, रात के दस बजे, फ़ौजी टुकड़ी को साथ लेकर वह फिर से शहर में मार्च करता हुआ निकला, यह देखने के लिए कि रात 8 बजे के बाद कोई आदमी अमृतसर की सड़कों पर घूम तो नहीं रहा है, कि "मेरे हुक्म की तामील हुई है या नहीं।" उसके अपने शब्दों में "सड़कें सुनसान पड़ी थीं, चारों ओर सन्नाटा था। एक आदमी भी देखने को नहीं मिल रहा था।"

इस भयावह घटना के कुछ अर्से बाद जब तथ्य और आंकड़े इकट्ठा किये जाने लगे तो जनरल डायर ने 25 अगस्त 1919 को जनरल स्टाफ़ डिवीज़न के नाम अपने बयान में कहा :

> मैंने गोली चलायी, और भीड़ के तितर-बितर हो जाने तक गोली चलाता रहा। और मैं समझता हूं कि जो व्यापक प्रभाव मैं लोगों के दिलों में पैदा करना चाहता था, उसे ध्यान में रखते हुए मैंने ज़्यादा गोली नहीं चलायी। अगर मेरे पास सैनिक अधिक संख्या में होते तो हताहत होने वालों की संख्या भी अधिक होती। मैं वहां भीड़ को मात्र तितर-बितर करने नहीं गया था, मैं तो लोगों के दिल में दहशत पैदा करने गया था। न केवल उन लोगों के दिल में, जो वहां पर मौजूद थे, बल्कि समूचे पंजाब में दहशत पैदा करने के अभिप्राय से गोली

जलियांवाला बाग़ हत्याकांड पर ब्रिटिश समाचारपत्र की टिप्पणी

निम्न उद्धरण उन टिप्पणियों में से लिये गये हैं जो "डेली हेरल्ड" नामक ब्रिटिश समाचारपत्र में जलियांवाला बाग़ के हत्याकांड को लेकर प्रकाशित की गयी थीं, और जिन्हें "अमृत बाज़ार पत्रिका" ने अपने 12 जनवरी 1920 के अंक में पुनः प्रकाशित किया था :

अमृतसर (पंजाब) में अप्रैल महीने में हुए गोलीकांड के बारे में प्राप्त पहले विस्तृत विवरण से स्पष्ट है कि यह कांड आधुनिक इतिहास में हुए सबसे खूनी नरसंहारों में से एक है।

साम्राज्यवादी उत्पीड़न और उसके विरुद्ध होने वाले पराधीन जातियों के विद्रोह के बारे में जो विवरण आज हम छाप रहे हैं, उनमें, अपनी नग्न भयावहता के कारण सबसे अधिक शर्मनाक और स्तंभित कर देने वाला विवरण, अमृतसर हत्याकांड का ही है। ... जनरल डायर के बयान पर आधारित रिर्पोट के अनुसार, 5000 व्यक्तियों की भीड़ पर, जो उस समय भाषण सुन रही थी, जानबूझकर गोली चलाये जाने से 400 से अधिक हिन्दुस्तानी मारे गये और 1500 ज़ख़्मी हुए।

इससे ज़्यादा काला अथवा घिनौना ब्यौरा कभी पढ़ने को नहीं मिला था। रिर्पोट के अनुसार जनरल डायर ने स्वीकार किया है कि गोली चलाये बिना भी भीड़ शांतिपूर्ण ढंग से विसर्जित हो सकती थी, केवल उसके मन में यह शक बना हुआ था कि उस हालत में भीड़ लौट आयेगी और उसकी खिल्ली उड़ायेगी, जिससे वह बेवकूफ साबित होगा।

उसके बयान की खबरों के अनुसार उसने स्वीकार किया है कि मानवीय क्लेश और यंत्रणा के प्रति अविश्वसनीय उदासीनता का प्रदर्शन करते हुए अंग्रेज अधिकारियों ने ज़ख़्मी लोगों को सड़कों पर वैसे ही पड़ा रहने दिया और उनकी चिकित्सा तक नहीं होने दी गयी। हम समझते हैं कि ऐसा इसलिए किया गया था कि अन्य जाति और धार्मिक आस्थावाले लोगों को पता चले कि ईसाई धर्म कितना सुंदर और दयालु धर्म है, कि हम ब्रिटिश लोग ईश्वर के उस पावन नियम को कितनी मान्यता देते हैं जिसमें कहा गया है कि हमें अपने दुश्मनों से भी प्रेम करना चाहिए।

चलाता रहा था। मैंने ज़रूरत से ज़्यादा सख़्ती की हो, इसका तो सवाल ही नहीं उठता।

पंजाब में हुई वारदातों को लेकर भारत और इंगलैंड में हुई तीखी भर्त्सना और जांच की मांगों के फलस्वरूप अक्तूबर 1919 में हंटर कमीशन का गठन हुआ। इसके सामने कुछेक प्रश्नों के उत्तर जनरल डायर ने इस प्रकार दिये :

प्रश्न : जब तुम बाग़ में गये तो तुमने क्या किया ?

उत्तर : मैंने गोली चलायी।

प्रश्न : तत्काल ?

उत्तर : फ़ौरन। मैंने सोच लिया था और आधे मिनट में ही फैसला कर लिया था कि मुझे क्या करना है, कि मेरा फ़र्ज़ क्या है।

प्रश्न : क्या गोली चलने के फ़ौरन ही बाद, भीड़ तितर-बितर होने लगी थी?

उत्तर : हां, फ़ौरन ही।

प्रश्न : क्या तुम फिर भी गोली चलाते रहे ?

उत्तर : हां।

प्रश्न : क्या भीड़ बाग़ के एक ओर कुछेक रास्तों से बाहर निकल जाने की कोशिश कर रही थी ?

उत्तर : हां।

प्रश्न : उन स्थानों पर भीड़ बहुत ज़्यादा रही होगी ?

उत्तर : हां।

प्रश्न : किसी-किसी वक़्त तुम गोली का रुख बदलकर सीधा उसी भीड़ पर गोली चलाने लगे ?

उत्तर : हां। यह ठीक है।

प्रश्न : क्या यह सही है ?

उत्तर : हां, सही है।

प्रश्न : और जो कारण तुमने बताये, तुमने फ़ैसला कर रखा था कि भीड़ पर गोली चलाओगे ?

उत्तर : ठीक है।

प्रश्न : जब तुमने 12 बजकर 40 मिनट पर यह सुना कि मीटिंग होने जा रही है, तब तुमने फ़ैसला कर लिया था कि अगर मीटिंग हुई तो तुम वहां जाकर गोली चलाओगे ?

उत्तर : ...मैंने फैसला कर लिया था कि मैं फ़ौरन गोली चला दूंगा ताकि सैनिक स्थिति को बचा सकूं। वक़्त आ गया था कि हम फ़ौजी कार्रवाई करें। अगर मैं और देर करता तो मेरा कोर्ट-मार्शल हो जाता।

प्रश्न : फ़र्ज किया बाग़ के अंदर जाने का रास्ता इतना चौड़ा होता कि बख़्तरबंद गाड़ियां अंदर घुस सकतीं, तो क्या तुम मशीनगनों से गोलियां चलाते ?

उत्तर : हां, ऐन मुमकिन है, चलाता।

प्रश्न : उस हालत में मरने और ज़ख़्मी होने वालों की संख्या बहुत अधिक होती ?

उत्तर : हां, होती।

प्रश्न : तुमने मशीनगनें इसलिए नहीं चलायीं कि बख़्तरबंद गाड़ियां अंदर नहीं जा सकती थीं ?

उत्तर : मैंने आपके प्रश्न का उत्तर दे दिया है। मैंने कहा कि अगर

बख्तरबंद गाड़ियां बाग़ के अंदर होतीं तो ऐन मुमकिन है, मैं मशीनगनें चला देता।

प्रश्न : मशीनगनों से सीधा भीड़ पर गोली चलाते ?

उत्तर : हां, मशीनगनों से।

प्रश्न : क्या मैं यह समझूं कि गोली चलाने से तुम्हारा अभिप्राय दिलों में दहशत पैदा करना था ?

उत्तर : तुम जो भी कहो, मैं उन्हें सज़ा देने जा रहा था। सैनिक दृष्टि से मैं उनके दिलों पर गहरा प्रभाव डालना चाहता था।

प्रश्न : दहशत केवल अमृतसर शहर में ही नहीं, बल्कि सारे पंजाब में?

उत्तर : हां, सारे पंजाब में। मैं उनका आत्मविश्वास तोड़ना चाहता था, उन विद्रोहियों का आत्मविश्वास।

ऊधम सिंह का बयान

13 मार्च 1940 के दिन, ऊधम सिंह ने, जो अपने मित्रों के बीच राम मुहम्मद सिंह आज़ाद के नाम से जाने जाते थे, लंदन के केक्स्टन हॉल में, माइकल ओ'ड्वायर की गोली मारकर हत्या कर दी, जो जलियांवाला बाग़ के हत्याकांड के समय पंजाब का लेफ्टिनेंट गवर्नर था। ऊधम सिंह को मौत की सज़ा सुनाई गयी और 12 जून 1940 को उन्हें फांसी दे दी गयी। निम्न उद्धरण उनके बयान में से लिया गया है :

> "उसके साथ ऐसा ही सुलूक किया जाना चाहिए था। असल मुजरिम वही था, वह मेरे देशवासियों के मनोबल को कुचलना चाहता था... मेरे लिए इससे गौरव की बात क्या होगी कि अपनी मातृभूमि के लिए मैं अपने प्राण न्योछावर कर रहा हूं।"

मार्शल लॉ

अमृतसर के लोगों की व्यथा हत्याकांड पर समाप्त नहीं हुई। चार यूरोपीयों की मौत और एक अंग्रेज़ महिला पर आक्रमण का बदला अभी पूरी तरह नहीं लिया गया था। अगले ही दिन, यानी 14 अप्रैल को, मार्शल लॉ लागू कर दिया गया।

शहर के लोगों का जीना दूभर हो गया। जिस सड़क पर मिस शेरवुड पर आक्रमण हुआ था, उस पर से गुज़रने वाले किसी भी भारतीय को पेट के बल रेंगना पड़ता था। इन्कार करने पर बंदूकों के कुंदों का इस्तेमाल कर आदेश का पालन करवाया जाता।

हर भारतीय को अपने सामने आने वाले हर अंग्रेज़ को सलामी देनी होती। ऐसा न करने पर गिरफ़्तारी का डर था। वैसे भी, शहर में हर किस्म की धर-पकड़ शुरू हो गयी। निर्दोष लोगों को भी पकड़ उन्हें यंत्रणाएं देकर

मार्शल लॉ के दौरान दी गयी यंत्रणाओं पर कांग्रेस उप-समिति की रिपोर्ट

पंजाब की घटनाओं की जांच के लिए, राष्ट्रीय कांग्रेस की पंजाब उप-समिति द्वारा एक कमीशन नियुक्त किया गया था। सर्वश्री मोतीलाल नेहरू, गांधीजी, मदन मोहन मालवीय, सी.आर. दास, अब्बास एस. तय्यबजी, एम.आर. जयाकर तथा के. संतानम, उस कमीशन के सदस्य थे। निम्न विवरण उस रिपोर्ट के एक अनुभाग में से लिये गये हैं, जिनका संबंध उन आदेशों से था जो ज़मीन पर रेंगने, कोड़े मारने और ज़बर्दस्ती सलाम करवाने के बारे में दिये गये थे। यह रिपोर्ट मार्च 1920 में कमीशन द्वारा पेश की गयी थी।

श्री लाभचन्द : "ईश्वरदास, पन्नालाल, मेलाराम और मैं घर जाना चाहते थे, लेकिन पुलिस ने इजाज़त नहीं दी। हमने फिर से इजाज़त मांगी। इस बार इस शर्त पर इजाज़त दी गयी कि हम रेंगकर सड़क पार करेंगे। इस तरह हम सभी को पेट के बल रेंगकर सड़क पार करनी पड़ी। घर जाने का कोई अन्य रास्ता नहीं था।"

लाला मेघामल : "उस रोज़ रात 9 बजे, घर लौटने पर मैंने देखा कि मेरी पत्नी बुखार में पड़ी है। उसके मुंह में डालने के लिए घर में पानी तक नहीं था। कोई डाक्टर या दवाई भी उपलब्ध नहीं थी। रात देर गये मुझे खुद ही बाहर से पानी लाना पड़ा। अगले सात दिन मेरी पत्नी का इलाज नहीं हो पाया, क्योंकि कोई भी डाक्टर पेट के बल रेंगकर आना नहीं चाहता था..."

एक अंधे आदमी को जबर्दस्ती रेंगने के लिए मजबूर किया और उसे ठोकरें मारी गयीं

पिछले बीस साल से केहर चन्द अंधा है। उसे पेट के बल रेंगने पर मजबूर किया गया और ठोकरें मारी गयीं। ...यह समझना मुश्किल है कि लोगों को कोड़े क्यों लगाये गये। ... (छः) लड़कों को बारी-बारी से टिकटिकी के साथ बांधकर प्रत्येक को तीस-तीस कोड़े लगाये गये।... उन्हीं में से सुन्दर सिंह नाम का एक लड़का, चौथा कोड़ा पड़ने पर बेहोश हो गया। एक फौजी ने उसके मुंह में पानी डाला। होश आने पर उसे फिर से कोड़े लगाये जाने लगे... अन्य लड़कों के साथ भी ऐसा ही बर्ताव किया गया, और उनमें से अधिकांश बेहोश हो गये। ... पुलिस उन्हें घसीटकर किले में ले गयी...।

गुनाह कबूल करवाये जाते। पकड़े गये लोगों के पास से अपील करने का अधिकार भी छीन लिया गया था। और छोटी से छोटी गलतियों के लिए भी खुलेआम कोड़े लगवाये जाते।

जलियांवाला बाग़ का हत्याकांड निर्मम और दोषपूर्ण तो था ही, पर इससे भी अधिक शर्मनाक ब्रिटिश सरकार का अमृतसर की जनता के प्रति यह अमानुषिक व्यवहार था। गांधी जी ने अपनी आत्मकथा में एक जगह लिखा है :

> इस भयंकर दुर्व्यवहार की तुलना में, जलियांवाला बाग़ की त्रासदी भी गौण पड़ जाती है; हालांकि मुख्यतः यह हत्याकांड ही था जिसने भारत और देश-विदेश की जनता का ध्यान आकृष्ट किया था....

जलियांवाला बाग़ में हुए हत्याकांड ने हमारे स्वतंत्रता संग्राम को एक नया मोड़ दे दिया। एक ओर उच्च नैतिकता का दावा करने वाले अंग्रेज़ शासकों की असली मानसिकता बेनकाब हो चली। दूसरी ओर, शहर में पाबंदियां और कर्फ्यू होने के बावजूद हज़ारों लोगों का इस तरह इकट्ठा होना और स्वतंत्रता की चाह व्यक्त करते शहीद हो जाना आगे के संग्राम में प्रेरणा का स्रोत बन गया। करीब तीन दशकों बाद जब भारत आज़ाद हुआ तो उस आज़ादी के पीछे उन लोगों का भी महत्वपूर्ण योगदान था जो 13 अप्रैल 1919 की शाम जलियांवाला बाग़ में हताहत हुए थे।

शहीदों की चिताओं पर लगेंगे हर बरस मेले
वतन पर मरने वालों का, यही बाकी निशां होगा।

तारा आर्ट प्रिन्टर्स, हंस भवन, बहादुरशाह जफर मार्ग, नई दिल्ली-110002 द्वारा मुद्रित

मार्शल लॉ के अंतर्गत दी गयी यंत्रणाओं के बारे में पं. मोतीलाल नेहरू के विचार

पंजाब की जनता को दी गयी यंत्रणाओं के बारे में निम्न विवरण, पं. मोतीलाल नेहरू के अध्यक्षीय भाषण में से लिया गया है जो उन्होंने 1919 में कांग्रेस के अमृतसर अधिवेशन में दिया था :

> "जनता के दिल में दहशत फैलाने की कोशिश की गयी। इतना ही नहीं, पंजाब के अधिकारियों ने, हमारे राजनैतिक जीवन के बहुमूल्य तत्व—हिन्दू-मुस्लिम एकता—पर प्रहार किया। प्रतिनिधि साथियो, आप भली-भांति जानते हैं कि हाल ही में, दिल्ली, लाहौर तथा अन्य स्थानों पर होनेवाली अव्यवस्था के दिनों में हिन्दू-मुस्लिम भ्रातृभाव के कितने हृदयस्पर्शी दृश्य देखने को मिले थे, जब बार-बार 'हिन्दू-मुसलमान की जय' के नारे लगाये जाते थे। साझे संघर्ष में, साझी भागीदारी की इस अभिव्यक्ति को पंजाब के अधिकारियों ने घोर अपराध ठहराया। इतना ही नहीं, उसे ब्रिटिश सम्राट के विरुद्ध खुले विद्रोह और जंग का नाम दिया और कानून की निगाह में एक नया जुर्म गढ़ डाला जिसे 'विधिवत् स्थापित सरकार के विरुद्ध हिन्दुओं और मुसलमानों का गठजोड़' की संज्ञा दी गयी। इस हिन्दू-मुस्लिम एकता का तरह-तरह से और खुलेआम मज़ाक उड़ाना, मार्शल लॉ के अधिकारियों की सबसे शर्मनाक हरकत थी...।"

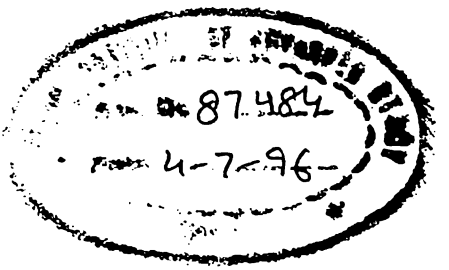

रु. 9.50

नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया

जलियांवाला बाग़ — यह नाम सुनते ही प्रत्येक भारतवासी के तन-बदन में रोमांच-सा होने लगता है। 13 अप्रैल 1919 को अमृतसर स्थित जलियांवाला बाग़ में हजारों निर्दोष लोगों को गोलियों से भून दिया गया। हत्याकांड कैसे घटा और हमारे स्वतंत्रता आंदोलन के इतिहास में इसका क्या महत्व है — इसी की कहानी लिखी है इस पुस्तक में हिंदी के जाने-माने साहित्यकार श्री भीष्म साहनी ने।

Library IIAS, Shimla
H 028.5 Sa 19 J
00087484